आतंकवाद को चुनौती

अमरनाथ यात्रा–1994

भोले की कृपा

अमरनाथ ! कई वर्षों से मन में संजोया एक सपना!! जो पूरा हुआ 21 अगस्त, 1994 को, दोपहर बारह बजे करीब; ठीक रक्षाबंधन के दिन। 'जय बाबा अमरनाथ बर्फानी, भूखे को भोजन प्यासे को पानी', 'हर–हर, महादेव', 'हर–हर, बम–बम', 'बम–बम, भोले', 'बोलो रे भाई, बम भोले', आदि–आदि नारों से कश्मीर घाटी की अमरनाथ गुफा को गुंजाते हजारों यात्री, साधु–संन्यासी और उतनी ही तादाद में लगे केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल, सीमासुरक्षा बल एवं भारतीय सेना के जवान...।

सर्वाधिकार सुरक्षित : हेमराज बंसल

इसी पुस्तक से

मन जानने उनके घर जा पहुंचा। वे तो मेरी अपेक्षा बहुत ज्यादा मजबूत थे। ''मौत आनी होगी तो यहां भी आवेगी। तू घबरा रहा हो तो मत जा, खासकर जब आतंकवादियों ने चुनौती दी है तो मैं तो अवश्य जाऊंगा।''

. . . . . .

''पर बाबा वहां तो सरकार ने टेंट लगाये हैं। कंबलों का इंतजाम किया है न?''

''सौ–दो सौ टेंट लगाये ढिंढोरो पीट दियो। तम्बू में पांव रखने की जगह ना मिली। कंबल–संबल रहने दे एक फट्यो टाट को टुकड़ो भी मेरे काने ना मिल्यों। बस जैसे–तैसे जान बची, यही गनीमत है। थें ऊपर जा रहा हो तो घरां ने तार कर दियो, 'मैं आ जावां तो ठीक, नि तो मैं को इंतजार कोनि कर ज्यो'।''

आशीष.....

'अमरनाथ यात्रा' श्री हेमराज बंसल की अमरनाथ यात्रा की आप बीती का विस्तृत विवरण है। भोलेनाथ के प्रति उनके निश्चल समर्पण के भावोद्‌गार भी स्थान–स्थान पर प्रकट हुये हैं। यात्राओं की असुविधाओं, विभिन्न सम्पर्कों और भिन्न चरित्र से जुड़ी घटनाओं का भी उल्लेख है।

इस प्रकरण का पहला लाभ तो यही है कि भविष्य के यात्रियों के लिये यह एक मार्गदर्शक का कार्य करेगी। फिर ऐसी यात्राओं से सामाजिक सम्पर्क का विस्तार होता है और सांसारिकता से दूर, नितांत अकेले होकर सोचने और करने की मानसिकता का सुख मिलता है। धार्मिकभाव चारित्रिक विकृतियों से बचाता है और प्रकृति के साथ इतनी आत्मीय निकटता व्यक्ति के 'स्व' को अधिक सकारात्मक बनाती है। सर्वाधिक उल्लेखनीय तथ्य तो यह है कि भगवान शिव के इन असंख्य भक्तों को आतंकवादियों से कोई भय नहीं है। यह आतंक पर भक्तिभाव की जीत है। पुस्तक को एक सहशीर्षक 'आतंकवाद को चुनौती' देना भी इसी महत्व को उजागर करता है।

यह यात्रा वर्णन है, यात्रा साहित्य नहीं, क्योंकि इसका उद्धेश्य साहित्य–रचना नहीं है, लेकिन आतंक, प्रकृति–सौन्दर्य, भिन्न पात्र और उनके स्वभाव, गरीबी–अमीरी की चुनौतियां जैसे कई संदर्भ ऐसे हैं जो कई कथानकों को जन्म दे सकते हैं। यों श्री बंसल का साहित्य सृजन से भी रिश्ता है और साहित्यानुरागी तो वे हैं ही।

यह पुस्तक अधिक से अधिक हाथों में पहुंचे और वे उसका लाभ उठावें, यही कामना है।

डा. शांति भारद्वाज 'राकेश'
'गीतांजली'
भगतसिंह कालोनी
कोटा– जंक्शन

जितना मैंने जाना

बर्फानी बाबा अमरनाथ और भाग्यशाली श्री हेमराज बंसल

भोले भंडारी 'बाबाअमरनाथ बर्फानी' की यात्रा अति विकट मानी जाती है। ऊँची–नीची रपटीली राह, पहाड़ियों की बर्फीली चोटियों के बीच दुर्गम घाटियां और हाड़–माँस कंपा देने वाले शीत के प्रभाव से ''यात्री कंपकंपाने लग जाते हैं, किंतु मन के दृढ़ संकल्प और आस्था के प्रबल विश्वास से मार्ग के समस्त संकटों–कष्टों की विकट बेड़ियां स्वतः ही कटती जाती है।

जब 'जय बम् भोले' के जयकारे करते हुये यात्री–मन, बाबा अमरनाथ देवधाम की पवित्र गुफा में भोलेनाथ बाबा के बर्फानी शिवलिंग (विग्रह) के दर्शन करता है तो उसे मानव देह की सार्थकता और जीवन की सफलता की भावनायें आह्लाद से आनन्दित कर देती है।

परन्तु संसार में सबको इस आह्लाद भाव के आनन्द का रस कहां मिलता है? जिस पर उसकी कृपा होती है, वही तो अमरनाथ धाम की यात्रा पर जा पाता है और जिस के भाग्य में भोले बाबा के दर्शन होते हैं, तभी तो पवित्र गुफा में बर्फानी शिवलिंग आकार लेता है.... नहीं तो वहां जाकर भी बस... प्यासे ही प्यासे... ।

श्री हेमराज बंसल परम् भाग्यशाली हैं, इनके पूर्व जन्मों के पुण्यफल–प्रबल हैं, उन्हीं के बल–प्रताप से इन्हें बाबा ''अमरनाथधाम बर्फानी'' की यात्रा के सुयोग मिलते रहे। आपके हृदय में अपूर्व–प्रकृति प्रेम और सर्वजग–आत्मीय भाव कूट–कूट कर भरा हुआ है। प्रकृति के प्रति नैसर्गिक आकर्षण भावना से प्रेरित होकर ही, आपके यायावरी व्यक्तित्व को जब–जब भी अवसर मिला, आप बाबा श्री के ''श्री विग्रह'' के दर्शनार्थ चल पड़े।

आपको इन यात्राओं के अनेक खट्टे–मीठे अनुभव भी हुये। आपको कहीं प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य ने विमोहित किया तो कहीं मानवीय सद्–व्यवहार ने, और कभी–कभी तो क्षैत्र विशेष के परिवेशगत सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक भावनाओं के बीच उद्वेलित भी हुए, फिर भी श्री बंसल के मन में इन सभी अनुभवों से पाठकमन के साथ 'सांझा' करने की कल्याणी–भावना सराहनीय है, जिसका परिणाम ही यह 'कृति' है।

वर्तमान हिंदी साहित्य में यात्रा वृतान्त का विशिष्ट महत्व है। इस दृष्टि से श्री बंसल ने अपनी कल्पना शक्ति के सामर्थ्य बल से भोले भंडारी के पवित्रधाम अमरनाथ गुफा की यात्रा के सौन्दर्य का जिस भांति आत्मसात कर अपनी लेखनी से मूर्त किया है, वह श्लाघनीय है। यह उनकी विकट पदयात्राओं से ही संभव हुआ है।

उनके इस यात्रा–वृतान्त की भाषा सीधी, सरल व प्रवाहमान प्रतीत होती है। कहीं कोई लाग–लपेट नहीं और ना ही जटिलता काा ताना–बाना। अलंकारिकता का बोझिल घटाटोप तो कतई नहीं। लेखक को जहां जैसा लगा और जैसा–जैसा मन बनता गया, बस वैसी– वैसी ही साफ–साफ पवित्र अभिव्यक्ति, इस कृति की सबसे बड़ी विशेषता मानी जा सकती है।

महाविद्यालय कोटा (राज.)

देवधाम की यात्रायें मानव मन को एक अलौकिक भावलोक में भी ले जाती है। जहां पहुंच कर उसका हृदय कमलदल सी पवित्र प्रफुल्लता से भरकर, निर्मल हो उठता है। शायद आपके मन को भी यही अनुभूति हो। अमरनाथ धाम यात्रा के मनमोहक सौन्दर्य से साक्षात्कार कराती यह कृति हिन्दी साहित्य के 'यात्रा–वृतान्त' के अन्तर्गत अवश्य समादृत होगी। इसी भावना और मंगल कामना के साथ... ।

दिनांक 22 दिसम्बर 2005

राधेश्याम मेहर
विशाल बाल विद्या निकेतन
गोरधनपुरा कोटा– 324007
वरिष्ठ अध्यापक– हिन्दी विभाग राजकीय
महाविद्यालय कोटा।

अनुक्रमणिका

क्र0 स0		पेज क्रमांक
1.	उत्प्रेरणा एवं प्रयास	5
2.	तैयारी	5
3.	प्रस्थान	6
4.	अग्र–योजना	8
5.	बस, अब मिले 'बस'	8
6.	यात्रा व्यवस्था	10
7.	जम्मू से रवानगी	10
8.	उधमपुर	11
9.	आशंकाओं के बीच 'कुद' में	12
10	.पत्नीटॉप का सौन्दर्य	13
11	.बटोत में आंदोलन की राह	13
12.	रामबन में रात्रि विश्राम	14
13.	रोटी के लिये जोखिम	15
14	.रामबन से रवानगी	16
15.	बनिहाल में	17
16.	जवाहर टनल	18
17	.धरती के स्वर्ग कश्मीर घाटी में	19
18	.पहलगांव	21
19.	होटल फाइवस्टार	22
20	चंदनबाड़ी की ओर	24
21.	कठिन चढ़ाई–पिस्सू टॉप	28
22.	जॉजबल एवं शेषनाग	29
23.	प्रधानजी की सेवाऐं	31
24.	गणेशटॉप की ओर	33
25.	पौषपथरी से पंचतरणी	34
26.	पंचतरणी में	36
27.	पंचतरणी में रात्रि विश्राम	36
28.	पंचतरणी से पवित्र गुफा की ओर	38
29.	भोले के दरबार में	39
30.	अमरनाथजी से वापसी	42
31.	वापसी में पंचतरणी	43
32.	पंचतरणी से शेषनाग वापसी यात्रा	44
33.	वाह! क्या लंगर है?	48
34.	पारीक सा. की गाथा	49
35.	वापसी में पहलगांव	50
36.	हिप्पी टेंट में रात्रि विश्राम	51
37.	पहलगांव से वापसी	52
38.	गुफ्तगू–ए–कश्मीर	53
39.	यात्रियों की क्षुधा	56
40.	सेना का नियंत्रण	57
41.	साधु ऐसे–ऐसे	59
42.	रामबन में भोजन	60
43.	वापस जम्मू	61
44.	माता वैष्णव देवी दर्शन	63

उत्प्रेरणा एवं प्रयास

मनुष्य ईश्वर की श्रेष्ठतम कृति है पर इसे भी जीवन ऊर्जा प्राप्त करने के लिये बार–बार उसकी शरण में जाना पड़ता है। मैंने भी स्वप्न संजो रखा था कि भोलेनाथ के दर्शन करने अमरनाथ जाऊँगा। कोई छः वर्ष पूर्व हमारे पारिवारिक मित्र जगदीश जी खण्डेलवाल बपावर वालों के साथ मेरा अमरनाथ यात्रा का कार्यक्रम बना था परन्तु अचानक जगदीश जी की बुआ जी बीमार हुयी और हमारे सूटकेस वैसे ही जमे रह गये। इसके बाद के वर्षों में छोटा भाई हरि एवं दीनू अपनी–अपनी मित्र मंडली के साथ अलग–अलग सत्रों में यात्रा कर आये और मैं साथी ही ढूंढता रहा। गत अगस्त में दीनू की अमरनाथ यात्रा वापसी के बाद यूं ही बजरंगलालजी पारीक से मेरी चर्चा हुई और उन्होंने अगली यात्रा अर्थात् अगस्त 1994 की यात्रा पक्की कर ली। वर्ष में हम जब भी मिले आपस में यात्रा का संकल्प दोहराते रहे। यात्रा के दो महीने पूर्व हमने और साथियों की खोज शुरू की। आतंक का माहौल, कश्मीर घाटी की बिगड़ती फिजां, ऊपर से आतंकवादियों द्वारा यात्रा पर लगाया प्रतिबंध, रोजाना होते बम–बंदूक के धमाके, यात्रियों को मारने की धमकी, यात्रा मार्ग के उड़ाये जाते पुल, कौन तैयार होता? छोटा भाई रामू एवं भाई सरीखा पड़ौसी हरिमोहन बंसल तैयार हुये। बारां में रेल आरक्षण सुविधा न होने के कारण कंवरसा. महेन्द्रजी (बहनोईजी) को चार टिकट लेने के लिये कोटा फोन किया एवं उन्हें भी हमारे साथ चलने हेतु प्रोत्साहित किया। जगदीश जी खण्डेलवाल का हमारे कंवर सा. से जीवंत सम्पर्क था। कंवर सा. से हमारा कार्यक्रम सुन, जगदीश जी बारां आये। उलाहने के स्वर में बोले,

''अच्छा अब शहीद होने के लिये तुम मुझे नहीं ले जा रहे। मैं भी जाऊंगा। यात्रा संपन्न हो गई तो वीर, कुछ हो गया तो शहीद।''

उनके भाषण में भय छुपा देख कर मैंने निराकरण करते हुये दृढ़ता पूर्वक कहा, ''हमें कुछ नहीं होगा। यदि सरकार ने रोक नहीं लगाई तो हम सफलता पूर्वक यात्रा करेंगे। हमारे मन में शहीद होने की कदापि तमन्ना नहीं है। यदि आप को चलना हो तो आप कोटा जाते ही रहते हो टिकट ले लेना।''

दो दिन बाद कोटा से समाचार ले लिया था कि पांच टिकट 15 अगस्त रात्रि 10 बजे रवाना होने वाली 'जम्मूतवी सुपरफास्ट' ट्रेन के कन्फर्म हो गये हैं।

अमरनाथ यात्रा के बारे में विभिन्न खबरें दो माह पूर्व से रेडियो, टी.वी. एवं समाचार पत्रों के माध्यम से प्रसारित होने लगी थी। हम ऐसी सारी खबरों को उत्सुकतापूर्वक पढ़ते एवं उनका विश्लेषण करते थे। हमारे मित्र–परिजन आदि सब भी उन खबरों को पढ़–पढ़ कर उद्वेलित हो रहे थे। परम मित्र सुदर्शन साबू के नेतृत्व में हमारे ऊपर निरंतर दबाव बनाया जा रहा था कि इस वर्ष यात्रा स्थगित कर दें। मीडिया व मित्रों के दबाव तले एक दिन मैं पारीक सा. का मन जानने उनके घर जा पहुंचा। वे तो मेरी अपेक्षा बहुत ज्यादा मजबूत थे।

''मौत आनी होगी तो यहां भी आवेगी। तू घबरा रहा हो तो मत जा, खासकर जब आतंकवादियों ने चुनौती दी है तो मैं तो अवश्य जाऊंगा।''

ऐसी उक्तियों से उन्होंने मेरा मनोबल भी सातवें आसमान पर पहुंचा दिया और अंत में हमने यही सोचा कि जायेंगे तो अवश्य, आगे सब परमात्मा के ही हाथ में है।

तैयारी

कोई दस दिन पूर्व यात्रा की तैयारियां शुरू कर दी थी। गत वर्ष गये अमरनाथ यात्री छोटे भाई दीनू व उनके साथियों के अनुभवों से हमें पूरा मार्गदर्शन मिला। पीठ पर आसानी से पीछे लटकाये जाने वाले वाटर प्रूफ बैग तथा मजबूत रैनकोट सेट सभी सदस्यों की पहली आवश्यकता निर्धारित की। सभी का नाश्ता–मूंग की दाल के लड्डू, नमकीन–मीठी मठरी, खस्ता

चना दाल, मेरे घर वालों ने बड़े उत्साह से तैयार करके बांधी। अत्यावश्यक औषधियां मंगवाई गई। सभी सदस्यों ने एक गर्म जरसी, टोपा तथा फिसलन पर चलने लायक बंद जूते अपनी पसंद से लिये। टार्च, ताश, शतरंज, कैमरा, टेपरिकार्डर कम कैसेट प्लेयर, लोटा–गिलास आदि के अतिरिक्त यात्रा के सामान्य सामान परस्पर मिलजुल कर पैक किये गये।

हमें पंद्रह अगस्त को प्रातः रवाना होना था और आठ अगस्त से सरकार ने अमरनाथ यात्रा की पूरी तैयारी कर यात्रियों को भेजना शुरू कर दिया था।

'सरकार की ओर से खाने–पीने, ठहरने, ओढ़ने–बिछाने, साथ ही पिठ्ठू एवं टट्टूओं तक की व्यवस्थायें व्यापक पैमाने पर की गई है।' ऐसा बखान नित्यप्रति दूरदर्शन द्वारा किया जा रहा था। इन समाचारों में अमरनाथ गुफा तक यात्री जाते हुये एवं दर्शन करते हुये दिखाये गये। इक्का–दुक्का आतंकवादी घटनाओं के समाचार भी सुनने को मिलते थे। कुल मिलाकर घटनाक्रम उत्साहवर्धक बनता जा रहा था। तेरह अगस्त को शायद इन्हीं से प्रेरित हो मेरे अनुज अशोक बंसल का साला संजय गर्ग झालावाड़ से बारां अमरनाथ हमारे साथ जाने के लिये आ गया और बारां में मेरी यात्रा के सबसे बड़े आलोचक सुदर्शन साबू का भाई सत्यप्रकाश साबू अमरनाथ जाने के लिये तैयार हो गया। तारीख 14 अगस्त को दिन में बपावर से जगदीश जी खण्डेलवाल का समाचार आया कि वे किन्हीं कारणोंवश यात्रा पर नहीं जा पायेंगे। इस तरह अन्त में हमारा छः यात्रियों का दल रह गया। प्रथम मैं स्वयं हेमराज बंसल, मेरा छोटा भाई रामचन्द्र बंसल (रामू), पड़ौसी मित्र हरिमोहन बंसल (हरि), आदरणीय मित्रवत् बजरंगलाल जी पारीक (पारीक साहब), ब्याई संजय गर्ग (संजय) एवं बारां के प्रमुख उद्योगपति, हमारे पारिवारिक मित्र सत्यप्रकाश साबू (एस.पी.)।

साबू के यात्रा सहगामी बनने का प्रसंग भी रोचक है। सुदर्शन ने मित्र मंडली एवं हमारे परिवार में मेरी यात्रा रोकने के लिये पुरजोर माहौल बनाया एवं मेरे साथियों तथा स्वयं मेरे ऊपर यात्रा न जाने के लिये जोर डालता रहा। दिनांक 12 अगस्त 94 को सुदर्शन साबू के भाई साहब विष्णु जी साबू दुकान पर मुझ से मिले और मेरी अमरनाथ यात्रा की तैयारी देख मेरी सराहना की, साथ ही मुझ से पूछा कि मैं सुदर्शन को क्यों नहीं ले जा रहा? मैंने वस्तु स्थिति बताई। उसी रात विष्णु जी साबू ने अपने परिवार में बात उठाई और कहा कि अच्छा साथ है, अमरनाथ यात्रा कर आओ। सत्यप्रकाश तुरन्त तैयार हो गया। इधर बड़े भाई बजरंग ने सुना तो वह भी तैयार हो गया कि यदि सत्यप्रकाश नहीं जा रहा हो तो मैं चला जाता हूं परन्तु एस.पी. अपने इरादे से नहीं डिगा। उसके इरादे की सर्वप्रथम सूचना मुझे सुदर्शन ने ही दी और मैने उसे ताना मारा।,

''रोक, रोक। मुझे तो नहीं रोक पाया अपने भाई को तो रोक।''

प्रस्थान

हम कार्यक्रमानुसार 15 अगस्त को प्रातः ग्यारह बजे हमारी जीप से कोटा के लिये रवाना हुये। सत्यप्रकाश साथ नहीं था, वह रात्रि को ट्रेन पर ही मिला। हमारे जल्दी रवाना होने का कारण उस दिन कोटा में हो रहे जन्मोत्सव कार्यक्रम में शामिल होना एवं मामाजी श्री सुन्दरलालजी गोयल को भी पाटूंदा से कोटा साथ लेकर जाना था। जीप में हम पांच यात्रियों के अतिरिक्त मेरा छोटा भाई हरि, छोटी बहिन निर्मला, पत्नी कृष्णा, भतीजियां बिल्लू व टिल्लू भी थी। ठसाठस भरी जीप नहर के रास्ते होती हुई तीन बजे कोटा पहुंची। बरसात में कालीसिंध नदी की रपट पर पानी आ जाने के कारण मुख्य मार्ग बंद हो जाता है। पहले हम मामाजी के मकान टीचर्स कॉलोनी महावीर नगर तृतीय पर गये, तत्पश्चात हम मौसी के घर गये। वहां महिलाओं एवं मामाजी आदि को उतारकर हम विजय मार्केट कुंवर सा के घर पहुंचे। कुंवर साहब महेन्द्र जी भी यात्रा जाने के इच्छुक थे पर उनका मन डांवाडोल था। कुंवर सा. के पिताजी ने उन पर बहुत जोर डाला लेकिन मैं तटस्थ बना रहा। कुंवर साहब का कोई वर्ष भर पहले पथरी का एक बहुत बड़ा आपरेशन हुआ था और अमरनाथ यात्रा के कष्टों का स्मरण कर मेरी इच्छा उन्हें यात्रा पर साथ ले जाने की नहीं

थी। यहीं जानकारी मिली कि जगदीश जी खण्डेलवाल का मन डांवाडोल करने के पीछे भी महेन्द्र जी का ही हाथ था।

हम सात बजे मौसीजी के प्रीतिभोज में पहुंच गये। सारे रिश्तेदारों में हमारी अमरनाथ यात्रा की चर्चा थी। सबने हमें भावभीनी विदाई दी। प्रीतिभोज से साढ़े आठ बजे कुंवर सा. के घर आये। ट्रेन आधा घंटा देरी से आ रही है, अतः हम कुछ रुक कर पौने दस बजे रेल्वे स्टेशन पहुंचे। सामान उतारने के बाद मैने जीप में मेरे साथ बारां से आये छोटे भाई हरि, पत्नी कृष्णा व बहिन निर्मला से आदेशात्मक स्वर से जीप में बैठ कर तुरन्त बारां रवाना होने के लिये कहा। उनकी बड़ी इच्छा थी कि वे हमें ट्रेन में बिठाने के बाद ही जायें। रात्रि, नहर का खराब रास्ता, मैं उन्हें एक क्षण भी रोकना नहीं चाहता था। उन्हें शायद बुरा लगा हो पर मुझे अपने दायित्व का बोध था। प्लेटफार्म के गेट पर ही छठा साथी सत्यप्रकाश मिल गया। आज प्लेटफार्म पर विशेष भीड़ थी। मालूम हुआ छत्तीस व्यक्तियों का दल कोटा से भी अमरनाथ यात्रा पर जा रहा है। सभी अग्रवाल बन्धु थे तथा हरिमोहन की रिश्तेदारी में निकल आये। उन्हें विदा देने आये परिजनों की भारी भीड़ में से हमें भी एक माला पहनाई गई, जो बारी–बारी से सबने अपने गले से उतार कर दूसरे साथी के गले में डाल दी। छत्तीस और छह बियांलीस हो गये। हमारे डिब्बे में उनमें से अधिकांश व्यक्ति सवार हुये। उनके पास भी कुछ स्लीपर कम थे और हम छः के पास भी पांच ही स्लीपर थे। सामान चेन तालों के साथ बांध दिये गये। रात शांतिपूर्वक व्यतीत हुई। प्रातः नई दिल्ली स्टेशन का शोर सुनकर नींद खुली। पारीक सा. ने नई दिल्ली में चाय पी। मैने मुंह आदि धोया और मेरी नींद उड़ गई।

दिल्ली में ट्रेन डेढ़ घंटा लेट हो चुकी थी। पंजाब में एक छोटे स्टेशन पर भी ट्रेन ढाई घंटा खड़ी रही। उस प्लेटफार्म पर पीने का पानी तक नहीं था। ट्रेन रेलकर्मियों की हड़ताल व चक्काजाम के कारण रोकी गई थी। जालंधर की रेल्वे कोलोनी में बाढ़ का पानी भर गया था। पानी की निकासी की कोई कारगर व्यवस्था करने में प्रशासन के असफल रहने पर रेल कर्मियों ने उक्त कदम उठाया था। वाह रे मेरे देश! समस्या एक कालोनी की और भुगतें लाखों यात्री। सारी रेल सेवायें चक्काजाम से अस्त व्यस्त हो गई। स्थिति भांप कर पारीक सा. रास्ते के चक्कीबैंक स्टेशन पर उतर छोले–भटूरे ले आये। हमारे द्वारा खाना लाने व खाने में सुस्ती दिखाने पर वे बहुत नाराज हुये। हमारी ट्रेन दोपहर तीन के बजाय रात्रि दस बजे जम्मू स्टेशन पहुंची। पारीक सा. के निर्देशन में सूटकेस उठाकर एक नं. प्लेटफार्म पर पहुंचे। अखबारों से जानकारी मिली थी कि यहां पर अमरनाथ यात्रियों के रजिस्ट्रेशन हेतु एक काउंटर खोला गया है। अतः कोई आधा घंटा तक पारीक सा. व सत्यप्रकाश विभिन्न दिशाओं में जाकर काउंटर तलाशते रहे। तत्पश्चात् पारीक सा. के आदेशानुसार सामान उठाकर प्लेटफार्म से बाहर निकले। वहां एक–दो व्यक्ति अमरनाथ यात्रा की जानकारी के लिये तैनात थे। पारीक सा. ने उनसे पूरी जानकारी ली। अब हमें 'पर्यटन विकास निगम' के दफ्तर में होते हुये 'रघुनाथ मन्दिर' या किसी होटल में पहुंचना था। सामान हमारे पास बहुत ज्यादा था। लिहाजा पेंतीस रुपये प्रति ओटो के हिसाब से दो ओटो किये। बहुत खरी–खोटी की। पहले पर्यटन विभाग में रजिस्ट्रेशन कराना पड़ेगा, फिर रघुनाथ मंदिर चलना पड़ेगा। वहां जगह नहीं मिलने पर ही होटल चलेंगें। ऑटोवालों ने आश्वासन दिया परन्तु रास्ते भर वे भारी भीड़ होने तथा रघुनाथ मंदिर खचाखच भरा होने की बातें करते रहे। खैर पर्यटन विभाग पहुंचे। हरिमोहन ने पास ही के पी.सी.ओ. बूथ से बारां टेलीफोन लगाये। तीन जने ऑटोरिक्शा व उनमें रखे सामान की रखवाली पर तैनात रहे। मैंने पारीक सा. को साथ लिया व हम पूछताछ करते हुये रजिस्ट्रेशन दफ्तर पहुंचे। पहली बार मेटल डिक्टेटर से गुजरना पड़ा। मैं लाइन में लगा और देखा–देखी एक कागज पर सभी साथियों के नाम पते लिखे। बारी आने पर नाम नोट कराये। हमें छः व्यक्तियों का रजिस्ट्रेशन मिल गया। अब हमें बस के टिकट की तलाश थी परन्तु टिकट बंद हो चुके थे। 'प्रातः चार बजे बस बुकिंग चालू होगी' यह सूचना पाकर हम ऑटो में जा बैठे। अब तक भीड़ को देखकर हम सभी को विश्वास हो गया था कि आज धर्मशाला–मंदिरों में जगह मिलना नामुमकिन है अतः ऑटोवालों की इच्छा पर होटलों की ओर चले। दो होटलों से निराश होने के

बाद निचले गुम्मट रोड पर तीसरा होटल 'संगम' खाली मिला। एक सौ पचास रुपये के हिसाब से दो कमरे लेकर तीन–तीन व्यक्ति घुस गये। कमरे अच्छे थे, सारी सुविधायें थी। हमने स्नान भी किया। जब तक रात्रि के बारह बज चुके थे। होटल वाले को साढ़े तीन बजे उठाने का आदेश देकर हम सो गये।

अग्र–योजना

ट्रेन में हमारे कोटा के साथियों ने योजना बनायी थी कि हम बियांलीस व्यक्तियों का इकट्ठा रजिस्ट्रेशन करवा लेंगें और अपनी अलग ही एक बस बुक करवा लेगें। इस हेतु उन्होंने सभी बियांलीस व्यक्तियों के नाम, पिताजी के नाम व उम्र सहित एक सूची तैयार की। बाद में मेरे मन में विचार पैदा हुआ कि इन लोगों के साथ हमारी कैसे निभेगी? इनके साथ महिलायें व बच्चे भी थे। यदि उन्होंने बस में पीछे की सीटों पर बैठने के लिये कह दिया तो? मैंने तानाबाना बुन पारीक सा. से चर्चा की और उन्होंने स्पष्ट शब्दों में अलग ही रहने का निर्देश दिया। हमारे सभी साथी भी इस निर्णय से सहमत रहे। उनके एक प्रतिनिधी मुझे पर्यटन विभाग रजिस्ट्रेशन काउंटर पर मिले। उन्होंने मेरे से पूछा,

'क्या मैं अलग से पर्ची दे रहा हूं?'

मैंने स्वीकृति दी।

''तो मैं आप लोगों के नाम इस लिस्ट में से काट दूं।''

मैंने पुनः हां कहा। उधर प्लेटफार्म पर हरिमोहन की उनके ब्याईजी से चर्चा हुई तो हरिमोहन ने भी स्पष्ट कह दिया कि हम अपने हिसाब से स्वतंत्र रहकर यात्रा करना चाहते हैं। इस तरह हमारा दल छः सदस्यों का ही रह गया। बारां से चल कर जम्मू के होटल में पहुंचने तक पारीक सा. के व हमारे बीच मन मुटाव सा हो गया। इससे बनी अनिर्णय की स्थिति से हमें उस रात्रि समय का बहुत नुकसान हुआ।

बस अब मिले 'बस'

तारीख 17 अगस्त, 1994, बुधवार– हमारा दिन साढ़े तीन बजे से शुरू हुआ। मैं तो कोई घंटा भर ही सो पाया था। मैंने एस.पी. को साथ लिया। हमारे होटल से बसस्टैण्ड, रघुनाथ मंदिर तथा पर्यटन विकास निगम भवन पास ही हैं। बाहर तेज बारिश हो रही थी अतः रेनकोट पहन कर होटल से बाहर निकले। पैदल चलकर पर्यटन कार्यालय पहुंचे। पूछताछ करते बस बुकिंग ढूंढा परन्तु वहां बत्तियां नहीं जली थी। हमारे जैसे और भी कई यात्री मय सामानों के वहां धरना दिये बैठे थे। कोई सवा चार बजे एक गनमेन ने बताया,

''बुकिंग छः बजे चालू होगी। पहले रात वाली बुकिंग की बसे यहां लगेगी जिन्हें छः बजे तक निकाल देगें। तत्पश्चात् नई बुकिंग चालू करेंगे।''

थोड़ी देर बाद एक अफसरनुमा व्यक्ति ने आकर यही घोषणा सभी प्रतीक्षारत व्यक्तियों को सुनाते हुये जोर से दोहराई। अब हमारा वहां रुकना व्यर्थ था। पास ही एस.टी.डी. बूथ था। मैं फोन मिलाने में व्यस्त हो गया। बारां तो बात नहीं हो पाई कोटा कुंवर सा. के अनुज पिंटू को समाचार दिया और बारां खबर भेजने का अनुरोध किया। साथ ही यह भी कहा कि अब पांच दिन किसी समाचार का इंतजार न करें। इसके बाद एक बार और बुकिंग आफिस देखते हुये हम होटल की ओर लौट पड़े। रास्ते में हरिमोहन एवं पारीक सा. आते हुये मिल गये। उन्हें पूरी सूचना दी और यह भी कहा कि फिर भी आप थोड़ी निगरानी करते आना। पारीक सा. को प्रातः कालीन चाय की जबर्दस्त आदत है। उसी की तलब में वे पर्यटन विभाग की ओर हमारे होटल पहुंचने से पूर्व ही चल पड़े थे।

संगम होटल का शटर आधा खुला था और हमारे दोनो कमरों में अंदर चिटकनी नहीं लगी हुई थी। रामू व संजू गहरी नींद में थे। परदेश में यह लापरवाही हमें लुटवा सकती थी। एस.पी. और मैं भी जाकर सो गया। पौने छः बजे स्वस्फूर्त प्रेरणा से मैं उठा और मैंने सबको जगा दिया। मैने सबको सवा छः बजे तक कमरे खाली करने का आदेश प्रसारित कर दिया। मेरा सोच था– 'छः बजे बुकिंग शुरू होगी और साढ़े छः या पौने सात तक बसें रवाना होगी। पारीक सा. व हरिमोहन का मैसेज बुकिंग चालू होने के तुरन्त बाद आयेगा।' वे अभी तक आये ही नहीं थे। कोई छः दस पर हरिमोहन हांफता सा आया। बोला,

''आप लोगों का हम बहुत देर से इन्तजार कर रहे हैं। सारी बसें निकल गई। पांच बजे से ही बुकिंग शुरू हो गई। आप नहीं आये इसलिये हमने टिकट नहीं लिये।''

हमें आश्चर्य मिश्रित क्षोभ हुआ। तुरन्त ऑटो बुलवाया, सामान पैक किया, होटल वाले को जाकर तीन सौ रुपये देकर बिल लिया। पांचों यात्री सारे सामानों सहित एक ही ऑटो रिक्शा में ठुंस कर साढ़े छः बजे बस बुकिंग आफिस पहुंचे। उधर पारीक सा. ने भी जाते ही पूरा गुस्सा उतारा। हम होटल में रुके चारों यात्री पारीक सा. की गल्ती मान रहे थे पर वक्त ही नजाकत को देख हमने चुप रहने में ही भलाई समझी। पारीक सा. का तर्क था कि उन्होंने हमारे से तुरन्त बस स्टेण्ड पर्यटक विकास विभाग पहुंचने के लिये कहा था। मेरे या एस.पी. के ध्यान में ऐसी कोई बात नहीं थी। परिस्थिति भी ऐसी थी कि पारीक सा. की बात गलत साबित होती थी। उनका चाय पीने जाते वक्त पौने पांच बजे मिलना। बुकिंग छः बजे चालू होने की सूचना और तीव्रगति से बरसता पानी, बस बुकिंग पर कोई बैठने की या छाया की व्यवस्था नहीं होना। सवा घंटा कोई इन परिस्थितियों में इंतजार करे यह भाव तक किसी के मन में नहीं आ सकता था। यह तो रही संवाद में गलती की बात और अब पारीक सा. का वह सोच लें जो उनके यात्रा अनुभवों व उम्र के लिहाज से आश्चर्यजनक था।

हरि या पारीक सा. पूरे समय कभी भी टिकट की लाईन में नहीं लगे। वे दो नम्बर में बसों में बैठकर जाने की सोचते रहे। लाइन में टिकट रजिस्ट्रेशन कार्ड दिखाने के बाद दिये जाते है। जिसमें बस नं. एवं सीट नं. होते हैं। सीटों के अतिरिक्त कोई बुकिंग नहीं की जाती। बस ड्राइवर पूरी गाड़ी बुक होने के बाद अतिरिक्त सवारियां बोनट, पेटी, कंडक्टर सीट आदि पर एडजस्ट कर देते हैं। उन्हें रजिस्ट्रेशन से कोई मतलब नहीं और न ही वे टिकट देते हैं। बस में चढ़ने से पूर्व यात्री से पूरा किराया ले लेते है। इस तरह बेचारा नं. 2 का यात्री बिना सीट तीन सौ किलोमीटर पहाड़ी रास्तों का सफर करने के लिये मजबूर हो जाता है। इन्हीं ड्राइवरों के लिये पारीक सा. ने कहा,

''बेचारे नोहरे कर–कर के जा रहे हैं। एक बसवाला तो अभी–अभी कह कर गया है।''

''चलो देखते हैं''।

मैं उनके साथ बस पर गया। ड्राइवर तुरन्त नोहरे करने आया।

''बैठो बाबूजी पेटी पर, बोनट पर, आगे सीट दे देंगे''।

मैं पारीक सा. को खींच लाया। उनकी सोच पर मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैंने सपाट स्वर में एक ही बात कही,

''हम बुकिंग से टिकट लेकर ही यात्रा करेंगे, चाहे जितना समय लग जावे''।

इसके बाद भी बस वाले आये और उन्होंने दलील दी कि अब कोई बस नहीं है, आपको कल जाना पड़ेगा पर हमने उनकी नहीं सुनी। हमें बुकिंग से भी लगातार यही सुनना पड़ रहा था कि बस आने पर ही बुकिंग होगी। हरिमोहन कोई घंटाभर धैर्यपूर्वक टिकट के लिये लाइन में खड़ा रहा फिर लाइन अपने आप हट गई। आठ बजे करीब एक बस आने की सूचना मिली और मैने संजय को दौड़ाया, पर अब एक नई समस्या सामने थी। चालीस सवारी होने पर ही टिकट दिये जावेंगे। चालीस सवारी की प्रतीक्षा में आधा घंटा और बीत गया। आखिर में हमें टिकट मिले। संजय आगे था अतः सीटें भी एकदम आगे की मिली। देर आयद, दुरूस्त आयद। ड्राइवर तेज

गाड़ी चलाने वाला था। हमें लगा कि हमारा विलंब यह पूरा कर देगा पर हमारे सारे भ्रम आगे जाकर किस तरह टूटते चले गये, देखें।

यात्रा व्यवस्था

जम्मू में पर्यटन विकास निगम ऑफ कश्मीर (टी.डी.सी.के.) कार्यालय से ही प्रशासन सारी अमरनाथ यात्रा का नियंत्रण कर रहा था। केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल, (सी.आर.पी.एफ.) सीमा सुरक्षा बल, (बी.एस.एफ.) तथा जम्मू कश्मीर पुलिस (जे.के.पी.) प्रशासन का सहयोग कर रहे थे। यात्री रजिस्ट्रेशन काउंटर, बस बुकिंग, टैक्सी बुकिंग सभी इस इमारत के अंदर ही थे। सारी बसें, टेक्सियां यहीं से यात्रा के लिये रवाना हो रही थी। पूरी इमारत तथा रोड़ पर सुरक्षाबलों का सख्त पहरा था। मुख्य स्थानों पर मेटल डिक्टेटर लगे थे एवं कमांडो तैनात थे। हर छोटे–बड़े अफसर के पास ट्रांसमीटर था जिस पर निरन्तर आदेश–निर्देश, सूचनायें प्रसारित हो रही थी। बस बुकिंग कार्यालय के सामने नोटिस बोर्ड पर बड़े–बड़े अक्षरों में चॉक से लिखा था।

'18 अगस्त को दस बजे प्रातः तक ही अमरनाथ के लिये बसें जावेंगी।'

वहां आगामी बस में बुकिंग के लिये यात्रियों की लाइन लग गई थी अर्थात् हमारी बस भी आज छूटने वाली अंतिम बस नहीं थी। इससे पूर्व हमारी कई परिकल्पनाऐं थी। जैसे बस सात बजे प्रातः के बाद नहीं छोड़ेंगे ताकि दिन–दिन में पहलगांव पहुंच जावें। बसें रास्ते में नहीं रुकेंगी, सीधे पहलगांव ले जाकर छोड़ेंगी, आदि–आदि।

जम्मू से रवानगी

संजय, रामू ने बस स्टैण्ड से दो बिस्कुट के डिब्बे एवं एक थैली अंकल चिप्स की ले ली। पानी की दोनों बॉटल एवं केटली भर ली। हम सब पानी–पेशाब से निवृत्त हो लिये। पारीक सा. ने चाय–बिस्कुट भी ग्रहण किऐ। हमारे बेग में नाश्ते का टिप्पन एवं थैलियां भरी पड़ी थी। हम बारह घंटे की अविराम यात्रा करने के लिये तैयार हो गये। बस रवाना होने के साथ ही वातावरण हर–हर महादेव, बर्फानी बाबा अमरनाथ की जय; आदि नारों से गूंज उठा। नारे लगाने में प्रारंभिक नेतृत्व हरिमोहन एवं पारीक सा. ने किया। बाद में आगे की सीट पर बैठे एक सहयात्री ने अपनी बुलंद आवाज में नेतृत्व लपक लिया। नारेबाजी पूरी यात्रा में होती रही। अभी बस रवाना हुई ही थी कि मुख्य सड़क पर बैठे सुरक्षा अधिकारी ने बस रोक ली। यात्रियों के बारे में ड्राइवर से पूछताछ की, नम्बर नोट किये और वॉकीटॉकी जो उनके गले में लटकी थी, से संदेश प्रसारित कर दिया। रिमझिम बारिश हो रही थी। बस पूरे जम्मू नगर में घूमकर उधमपुर रोड़ पर, नदी के किनारे–किनारे बढ़ने लगी। एक तरफ हिमालय पर्वत की ऊंची–ऊंची चोटियां, दूसरी तरफ इठलाती, बलखाती बहती तवी नदी। फुहारों से ठंडा मौसम और बादलों के धुंधलके को ओढ़े पहाड़। एक बारगी इस प्राकृतिक नजारे पर सभी मोहित हो उठे। एक स्थान तो ऐसा आया जहां से कई किलोमीटर लम्बी तवी नदी जम्मू शहर की ओर बहती हुई, सर्पाकार, मटमैले पानी से भरी नजर आई। एकाएक मुंह से निकल पड़ा, 'वाह क्या दृश्य है!' सभी की आंखे खिड़कियों से बाहर देख रही थी। पहाड़ी घुमावदार रास्तों में बस आगे बढ़ती रही। बस के मार्ग में दोनों ओर लाल मुंह वाले बंदरों की भरमार थी। बंदर सड़क पर बस के साथ–साथ दौड़ लगाते थे। यह रास्ता कटरा को जाता है। जहां से माता वैष्णोदेवी का मार्ग, पद्यात्रा शुरू होती है। माता वैष्णोदेवी पर वर्ष भर यात्री आते–जाते है। धार्मिक भावना से यात्रीगण बंदरों के लिये मूंगफली, केले, चने आदि खाद्य वस्तुयें डालते है। उसी के लालच में बंदर बसों के साथ दौड़ लगाते है। हमारे आगे–पीछे काफी बसें चल रही थी। उनमें कटरा के अतिरिक्त कश्मीर घाटी के विभिन्न शहरों तक जाने वाली दैनिक बसें भी थी। बंदरों को माता वैष्णोंदेवी जाने वाले तीर्थयात्रियों से ही खाने के लिऐ कुछ मिल रहा था । हम अमरनाथ यात्री तो स्वयं के खाने के प्रति ही चिंतित थे। भला बंदर रूटिन बस, वैष्णोदेवी

यात्री बस और अमरनाथ यात्री बस में अंतर कैसे पहचान पाता? मुझे बार–बार बंदरों के कुचलने की आशंका होती रही पर कोई दुर्घटना नहीं हुई। आगे चलकर हमारी बसों ने कटरा वाला मार्ग छोड़ दिया एवं उधमपुर मार्ग पर बढ़ने लगी। इस रास्ते में एक लम्बी सुरंग भी पार करनी पड़ी। कुछ आगे जाकर बस खड़ी हो गयी। सामने देखा तो आंखों से ओझल न होने वाली बसों, ट्रकों, कारों, जीपों की लम्बी कतार लगी थी। पानी अपनी मध्यम गति से बरस रहा था। मैंने रैनकोट निकाला और नीचे उतर गया। सड़क पर बहुत प्यारा दृश्य फैला था। मैंने आवाज देकर कैमरा निकलवाया और सभी को नीचे उतरवाया। बरसते पानी में विभिन्न कोणों से चार–पांच फोटो लिये।

उधमपुर

सुरक्षाबलों द्वारा कोई घंटे भर तक उधमपुर से जम्मू जाने वाली गाड़ियां निकाली गई। तत्पश्चात् हमारा नम्बर आया। आगे सड़क बुरी तरह क्षतिग्रस्त हुई थी और संभवतः रात भर बंद रही थी। बी.एस.एफ. के जवान बुल्डोजरों से साफ किये रोड़ से एक–एक गाड़ी निकलवा रहे थे। सामने से आने वाली गाड़ियों में अधिकांश वाहन सुरक्षाबलों के थे। अमरनाथ यात्रा से लौट रहे यात्री वाहन भी काफी तादाद में थे। सभी यात्री वाहनों में से भोले बाबा का जयनाद गूंज रहा था। अमरनाथ से लौटे यात्री वेशभूषा, झंडा, तिलक एवं चेहरे की थकान से स्वतः ही पहचान में आ रहे थे। आगे जाकर हमें पता लगा कि बंद रास्ते के कारण वे डेढ़–दो दिन बाद पहलगांव से जम्मू पहुंच रहे है। यहां यात्रीगण विभिन्न अफवाहों के शिकार हुये परन्तु ज्यों–ज्यों कारवां आगे बढ़ा हमारी धारणायें बदलती गई। उधमपुर में हमारी गाड़ियों की पुनः चैकिंग हुई। रूटीन वाली बसों को आगे निकाला गया। यात्रा बसों पर आगे की साइड पर 'श्री अमरनाथ जी यात्रा' के बोर्ड लगवाये गये। सभी बसों पर पूर्व में ही यात्रा बस नं. लगे हुये थे। कोई 260 यात्रा बस नं. तक पढ़ने में आये। निजी टेक्सियों एवं जीपों पर अतिरिक्त रूप से कुछ चिन्हित नहीं था। पूरी तैयारी के बाद बसें उधमपुर से आगे भेजी गई। बाहर निकलते ही मिलेट्री वालों ने हमें फिर रोक दिया। हमारी गाड़ी यात्री बसों से बहुत पीछे रह गई थी। उन्होंने सोचा था कि सभी यात्री बसें आगे जा चुकी हैं। बाद में उन्हें संतुष्ट करने पर उसने ड्राइवर को आगे जाने की अनुमति दी और निर्देश दिया कि दो बजे तक रामबन पहुंचना है वरना आगे नहीं जाने दिया जावेगा। ड्राईवर ने चुपचाप सुना, हाथ हिलाया और गाड़ी बढ़ा दी।

हम ड्राईवर के बिल्कुल पीछे वाली सीट पर थे। संजय ने पूछा,

''भाई रामबन कितनी दूर है।''

''अभी कोई नब्बे–सौ किलोमीटर होगा। साढ़े ग्यारह तो बज गये, बिना रुके चले तो पहुंच भी सकते हैं।''

हमारे दिलों की धडकनें बढ़ गई। अगर दो बजे रामबन नहीं पहुंचे तो? मैंने तो पारीक सा. से कह भी दिया,

''असंभव है, पहाड़ी घुमावदार रास्ते, क्षण–क्षण में मृत्यु का खतरा, गाड़ी तेज चलाने के लिये भी नहीं कह सकते। बाकी सब गाड़ियां निकल गई और अपनी गाड़ी रुक गई तो? आगे तो वैसे ही खतरनाक इलाका है।''

कई कपोल कल्पनायें और आशंकायें हमारे दिलों–दिमाग पर मंडराती रही। पारीक सा. इस मामले में मस्त दिखे। कोई आशंका जाहिर करते ही कहते,

''तुम जा रहे हो क्या? वह भोलेनाथ बुला रहा है। निश्चिंत रहो, उसे सबका ध्यान है।'' इस उपदेश से हमारे अन्तःकरण में उभरे आशंकाओं के बादल, तेज तूफान आने से छिटके बादलों की तरह गायब हो गये। उधमपुर से दस–पांच किलोमीटर आगे पुनः कारवां रुक गया। अब तक बारिश धीमी हो गई थी। बस के सभी यात्री उतर पड़े। सड़क के दोनों ओर अनार के बहुत से पेड़ लगे थे। हमारे आगे बसों का बहुत बड़ा कारवां रुका पड़ा था शायद इसीलिये मेरी पहुंच में कोई

अनार पेड़ पर नहीं बचा था। कुछ दुस्साहसी आगे बढ़कर छोटे कच्चे अनार तोड़ रहे थे जो व्यर्थ ही जाने थे। खैर यहां ज्यादा नहीं रुकना पड़ा परन्तु दो बजे रामबन पहुंचने के विचार में यह समय बहुत खला। कुछ किलोमीटर आगे फिर कारवां रुका पड़ा था। यहां दो–तीन दुकानें थी। कोई छोटा गांव होगा। दुकानों की सभी चाय, बिस्किट, नाशपती, सेव बिक गये। हमने भी कुछ नाशपतियां एवं सेव खरीदे। चाय पीने वालों को काफी धक्का–मुक्की के बाद भी निराश होना पड़ा। यहां सड़क किनारे लगे बागों से मुफ्त के टमाटर व सेव तोड़कर भी लोगों ने अपनी भूख मिटाई। इस स्थान पर कारवां कोई एक घंटे रुका रहा। यात्रियों का धैर्य चुक गया। कुछ लोगों ने नारेबाजी की और शायद इसी वजह से बसें आगे के लिये छोड़ी गई। यह स्थान उधमपुर एवं कुद कस्बों के बीच का था। इन दोनों कस्बों के बीच कोई ऐसा स्थान नहीं था जहां यात्री कुछ खा–पी सकें। पीने का पानी मटमैला सा मिल रहा था। हमने उसी पानी से दोनों बोतलें एवं केटली भरी।

आशंकाओं के बीच 'कुद' में

कुद कस्बे तक कारवां रुक–रुक कर धीरे–धीरे बढ़ता चला गया। कुद बहुत ऊंचाई पर है। रास्ते में सर्पाकार में घुमा–घुमाकर रोड़ पहाड़ी पर चढ़ाया गया है। पांच–सात नीचे की सड़कें ऊपर बस में बैठे–बैठे नजर आ गई। कुद के रास्ते में चलते हुये मुझे मसूरी के रास्ते की याद आ गई। हिमालय कश्मीर का हो या उत्तरांचल का एक जैसा ही भव्य है। हम कुद कस्बे में बिकते खाने के सामान, होटलों, फलों की दुकानों को देखकर सोचने लगे, 'काश बस यहीं रुकती तो हम खाना खा लेते।' हमारी इच्छा पूरी भी हुई पर कोई दो किलोमीटर आगे जाकर। पूरा कारवां पुनः खड़ा हो गया। आसपास नजर दौड़ाई, खाने का कुछ नहीं था। पारीक सा. उतरे और समाचार लाये कि पकौड़ी मिल रही है, आगे खाने के होटल भी हैं। मेरा मूड यहां उतरने का नहीं हुआ। हरिमोहन व सत्यप्रकाश दोनों उतरकर पकौड़ी या खाना लाने चले गये। काफी देर तक उनके न आने पर पारीक सा. उन्हें ढूंढने गये परन्तु वे नहीं मिले। पकौड़ी के ठेलों पर भयंकर भीड़ थी। कुछ नाश्ते के आइटम हमने खरीद कर खा लिये। हरिमोहन व सत्यप्रकाश काफी देर बाद खाली हाथ आये। बोले,

''कोई आधा किलोमीटर दूर होटल है, हम दोनों खाना खाकर आ गये, अब आप खा आओ।''

यह सुनते ही पारीक सा. का पारा सातवें आसमान पर जा पहुंचा।

''खाकर क्यों आये? सबके लिये यहां लाते। मैं तो इतनी बार उतरा, कभी अकेला खाकर नहीं आया। बस रुकी ही रहेगी क्या?''

हरिमोहन व सत्यप्रकाश पंद्रह रोटियों का आर्डर देकर आये थे। होटल पर भारी भीड़ थी अतः रोटियां इकठ्ठी नहीं हो पा रही थी। अतः उन्होंने सोचा, 'यहां खड़े रहने से तो अच्छा है वे बस पर पहुंचे और हमें गरमा–गरम दाल–रोटी खाने भेज दें।' हमारी किस्मत में रोटी खाना नहीं था। बसों के आगे बढ़ने के आसार नजर आने लगे थे। मैंने डिब्बे में से नाश्ता निकाला और एक–एक चम्मच भर कर लड्डू का चूरमा चार कागजों में लेकर खाने लगे। हमने सुबह भी बस में यही नाश्ता किया था। मूंग की दाल का हलवा, मठरी और चने की तली हुई नमकीन दाल। मैंने कुछ ज्यादा खा लिया। मैं कभी थाली में भी झूठन नहीं छोड़ता यहां कैसे फेंकता? बाजार से भी थोड़े बिस्कुट आदि आ गये थे। हमारा पेट भर गया परन्तु पारीक सा. का मन नहीं भरा। रोटियों की कसक हमारी पूरी यात्रा में बनी रही और गाहे–बगाहे पारीक सा. इस बात को लेकर दोनों पर चोट करते रहे।

कहां तो दो बजे रामबन पहुंचने के सुरक्षाबलों के आदेश थे और कहाँ हम डेढ़ बजे तो सिर्फ कुद ही पहुंचे और यहां से रवाना हुये तीन बजे। इसके लिये भी पूरा आंदोलन हुआ। सौ–दो सौ यात्रियों ने इकठ्ठे होकर नारेबाजी की। कुद में तैनात जे.के.पी. (जम्मू कश्मीर पुलिस) के एस.पी. का घेराव किया। उसे बुरा–भला कहा और उस पर यात्रियों को परेशान करने का आरोप लगाया।

काफी जद्दोजहद के बाद बसें रवाना की गई। अब तक हर यात्री के मन में साफ हो गया था कि हम आज पहलगांव नहीं पहुंच सकते। रास्ते में ही कहीं रुकना पड़ेगा। कुद पहुंचने तक हमारे मन में आतंकवाद एवं पुलिस व्यवस्था से उपजा तनाव बहुत कुछ कम हो गया था। ज्यों–ज्यों हम आगे बढ़ रहे थे हम हमारे जहन में बसे खतरनाक इलाके को भी आगे बढ़ाते जा रहे थे। जम्मू में हम उधमपुर के आगे खतरा मान रहे थे। यहां कुद में आकर 'बटोत व रामबन से आगे खतरा है' ऐसी धारणा बन गई। वैसे भी अब हम डोडा जिले में प्रवेश करने वाले थे, जो एक माह पूर्व तक अत्यन्त अशांत था।

पत्नीटॉप का सौन्दर्य

बस पहाड़ों पर ऊपर और ऊपर चढ़ती चली गई। खूबसूरत 'कुद' शहर छोटा और छोटा होता गया। रोड़ की एक तरफ ऊंची पहाड़ियां और दूसरी तरफ मीलों गहरी खाई। यहां बस के रास्ते बहुत लंबे बनाने पड़ते हैं। कौवे की उड़ान से दूरी एक किलोमीटर, पैदल चलने पर पांच किलोमीटर और बस से पंद्रह किलोमीटर। बस चलती हुई पत्नीटोप पहुंची। पत्नीटोप में सघन देवदार के वृक्ष हैं। सभी साथी कयास लगाते रहे, सौ फुट ऊंचे होगे या डेढ़ सौ फुट। चीड़ के वृक्ष भी बहुत है। सारे वृक्ष धुंधलके वाले बादलों से ढके हैं। बस धुंध के बीच से निकली। हमारी उम्मीद के विपरीत बादल बस में नहीं घुसे और न ही धुंध में हाथ बाहर निकालने से हाथ गीले हुये। पत्नीटोप में कई होटल बने हुये हैं। दो–चार दिन रुकने की श्रेष्ठ जगह लगी। पत्नीटोप से रास्ता नीचे उतरता है। काफी कुछ उतरने के बाद बस को कुछ देर रुकना पड़ा। रास्ता खराब था। पहाड़ से पेड़, पत्थर, मिट्टी रोड़ पर गिरे पड़े थे। उन्हें हटाने के लिये दो बुलडोजर लगे थे और एक–एक गाड़ी आहिस्ता–आहिस्ता निकाली जा रही थी। यहां पांच मिनट नीचे उतर कर हमने पहाड़ एवं घाटी का खूबसूरत नजारा देखा। बस टूटे रास्ते से आगे बढ़ी। देखा कुद की ओर जाने वाले वाहनों की विशाल कतार लगी है। कतार समाप्त होने के बाद एक साथी ने बताया दो सौ साठ वाहन हैं। आगे जाकर मालूम हुआ हमारे यात्रियों द्वारा आंदोलित होने पर इन वाहनों को रोका गया एवं हमें निकाला गया है।

बटोत में आंदोलन की राह

बटोत कस्बा आते ही पुनः बसें रुक गई। हमारे आगे की बसों के यात्री सामान उतार–उतार कर जा रहे थे। मालूम हुआ यहीं रुकना पड़ेगा। आगे जाने का आदेश नहीं है। अभी तो साढ़े चार ही बजे हैं, आगे जाया जा सकता है। नवयुवक यात्री आगे जाने की मांग करने लगे। समय था ही, अंधेरे से पूर्व निश्चित ही हम रामबन पहुंच सकते है। जो यहां से 28 किलोमीटर दूर है। पुनः अफवाहों का बाजार गर्म हो गया। 'रामबन में खतरा है, इसलिये यहां रोक रहे है। पुलिस वाले होटल वालों से रिश्वत खा गये। जे.के. पुलिस परेशान कर रही है। आगे कहीं बम फटा है। रास्ता खराब है आदि–आदि।' छोटा सा कस्बा बटोत और दो सौ बसें। कहां रुकेंगे, कहां सोयेंगे, कहां खायेंगे? पारीक सा. ने काफी जानकारियां भी इकठ्ठी की। अधिकांश यात्री स्कूलों में भेजे जा रहे हैं। दस–बीस होटल भी है परन्तु खाली मिलना मुश्किल है। खाने के होटल यहां अच्छे हैं। हमारा यहां रुकना विधाता को मंजूर नहीं था। पुनः एक आंदोलन उभरा। 'लाठी गोली खायेंगे, रामबन जायेंगे। जे.के. पुलिस मुर्दाबाद।' सड़कों पर शोर मच गया। आखिर पुलिस को अनुमति देनी पड़ी। 'जिसकी इच्छा हो रामबन जाये, जिसकी इच्छा हो बटोत ठहरे, परन्तु रामबन ज्यादा खतरनाक जगह है।' हमारी बस में रामबन जाने के लिये सर्वसम्मति थी। ड्राईवर, कंडेक्टर बटोत रुकना चाहते थे। यात्रियों से कहासुनी के बाद उसने बस आगे बढ़ाई। एक चौराहे पर पुलिस का एक बड़ा अधिकारी बिगड़ती यातायात व्यवस्था से खीजकर जोर–जोर से डंडा घुमाते हुये चीख रहा था,

''बटोत में रुकना हो तो इधर बढ़ो''।
हमारे ड्राइवर ने कहा,
''आगे जाना है।''
पुलिस अधिकारी चीखा,
''मरो, बढ़ो, यहां काहे को खड़े हो।''
अब तक रास्ता थोड़ा खुला था और ड्राइवर ने बिना उलझे गाड़ी बढ़ा दी।

रामबन में रात्रि विश्राम

रामबन के रास्ते में भी एक जगह रोड़ खराब मिला पर हमें रुकना नहीं पड़ा। साढ़े छः बजे रामबन पहुंच गये। बस खड़ी होने से पूर्व ही हमने सामान पैक कर लिये। रामबन आते ही हरिमोहन व एस.पी. व्यवस्थायें देखने के हिसाब से बस से उतर कर रोड़ के किनारे–किनारे आगे बढ़ गये। इधर हमने ड्राइवर व खल्लासी से सामान उतारने के लिये कहा। हमारे सूटकेस ऊपर रस्सियों से बंधे, तिरपाल से ढंके थे। उन्होंने हमें रोका और कहा कि जहां पुलिस वाले आदेश करेंगे, वहीं आपको उतारेंगे। सभी बस में बैठे रहो। कोई आध घंटा बाद बस आगे बढ़ी। हमारे दोनों साथी नहीं आये थे। रास्ते में हरिमोहन रोड़ पर नजर आया। उसे इशारा कर दिया कि आ जाओ परन्तु एस.पी. न होने की वजह से उसने कहा,

''हम आ रहे हैं, चलो।''

बस शहर से काफी आगे बढ़कर रोड़ के नीचे उतर गई। वहां सार्वजनिक निर्माण विभाग का गोदाम था। जो इस वक्त बी.एस.एफ. की छावनी बना हुआ था। चैकिंग व यात्रियों की काउंटिंग के बाद बस घुमावदार रास्तों से आगे बढ़ती हुई मुकाम पर पहुंची। रात यहीं रुकना है। सब अपने–अपने सामान उतारो। जहां हमारी बस खड़ी थी वहां से रोड़ देखना या रोड़ से बस देखना नामुमकिन था। 'एस.पी. व हरिमोहन कैसे पहुंचेगें,' यह हमारी सबसे बड़ी चिंता थी। सामान उतार कर एक संकरी सी गैलरी में रखे। जहां छः आदमी बैठ भी नहीं सकते थे। इसके बाद हमने बाहर एस.पी. व हरिमोहन को ढूंढने जाने के लिये कोशिश शुरू की। पहले तो हमें मनाकर दिया गया। ज्यादा अनुनय–विनय करने पर कहा गया कि गेट पर बस का टिकट बताकर बाहर जाओ और बस का टिकट बताकर ही वापस आओ। दुर्भाग्य (?) से टिकट हरिमोहन के पास रह गया था। बी.एस.एफ. के कई अधिकारियों से पूछताछ के बाद भी हमारी समस्या का कोई समाधान नहीं निकला। भोजन–पानी की चिंता तो थी ही, पर सर्वप्रथम अपने साथियों को ढूंढकर यहां लाने की चिंता थी। आखिर भोलेनाथ ने चमत्कार किया। हमारे दोनों साथी सामने से आते हुये दिखाई दिये। 'कोटि–कोटि धन्यवाद प्रभु! कैसा सुखद आश्चर्य प्रदान किया!! इस परिसर के चारों ओर सख्त पहरा है। बिना इजाजत परिन्दा भी पर नहीं मार सकता। जरा सी आहट पर चौकसी के लिये तैनात जवान गोलीबारी कर देते हैं। आतंकवादी इलाके के बीच बी.एस.एफ. की छावनी में ऐसी सावधानी लाजमी भी है। हमारे दोनों साथियों को अपने बीच पाकर हमने राहत की सांस ली।

हरिमोहन से दास्तान सुनी।

''होटल की तलाश करते–करते काफी आगे निकल गये। कोई होटल खाली नहीं मिला। जब बस क्रॉस हुई, एस.पी. एक होटल के अंदर गया हुआ था। उसके आते ही हम दोनों बस के मार्ग पर आगे बढ़ने लगे। पूरा गांव पार करने पर भी बस नहीं मिली। एक रास्ता नीचे की ओर जा रहा था। जहां बैरक बने थे। हमने सोचा, इनसे पूछते है। या तो बस आगे गई या यहां नीचे, और तो कोई रास्ता नहीं है। बस आगे भी क्यों जायेगी? रामबन तो समाप्त हो गया। वहां तैनात संतरियों ने बस जाने की बात तो स्वीकार की पर कहा कि हमें तो बस वाले एक सवारी के लिये ही कह कर गये थे। सौभाग्य से मेरे पास टिकट था। उससे संतरियों को विश्वास दिलाया और आपसे आ मिले।''

छहों साथी मिलकर अब यहां की व्यवस्थाओं का अध्ययन करने लगे। नहाने के लिये बिल्कुल बगल में जोरशोर से गर्जन करती बहती चिनाब नदी। पीने के पानी की दो टंकियां जिनमें पानी सीमित था। ठहरने के लिये कुछ बरामदे। हमारी बस तीन बसों में सबके बाद आई थी अतः अधिकांश बरामदे यात्रियों ने पहले ही बिस्तर बिछाकर रोक लिये थे। बाद में हमें ऑफिस के सामने वाले बरामदों में सोने की अनुमति दी गई और हमने सारा सामान तुरत–फुरत वहां ले जा कर रख दिया। कोई तीन घंटे से बारिश रुकी हुई थी अतः उस स्थान की छत से पानी टपकना बंद हो चुका था। नीचे का गीला मैंने रूमाल से पोंचा लगाकर साफ किया। दो प्लास्टिक शीट हमारे पास थी। उनके ऊपर दरियां बिछाकर सोने के लिये जगह बना दी। मैने आशंका प्रकट की,

''रात में पानी आ गया तो?''

पारीक सा. ने विश्वासपूर्वक कहा, ''अभी मैं तुम्हारे साथ हूं, पानी नहीं आयेगा।''

रोटी के लिये जोखिम

शाम को सवा सात बजे थे। खाने की सख्त तलब थी। बी.एस.एफ. के जवानों ने एक छोटा रास्ता बता दिया। हमने खाना लाने के लिये रामू व संजय को नियुक्त किया। छोटे रास्ते पर तैनात संतरियों ने उन्हें समझाया कि आते वक्त तीन बार टॉर्च जलाकर संकेत दे देना। रात को नौ बजे से यहां कर्फ्यू लगा दिया जाता है, अतः तुरन्त लौटना। पारीक सा. भारी मन से दोनों बच्चों को संतरियों से आगे तक छोड़कर आये। उन्होंने आते ही आगे की व्यवस्थायें जमाना शुरू किया। बर्तनों में पानी भरा। सूटकेसों से गर्म ओढ़ने–बिछाने के कपड़े तथा अन्य सामान निकाले। इस के बाद हम पूछते–पूछते चिनाव नदी के किनारे हाथ–मुंह धोने गये। वहां से आने पर काफी देर तक दोनों संतरियों से बातें करते रहे।

''सुबह से यहां तैनात संतरियों ने जूते नहीं खोले हैं। रामबन से थोड़ा आगे सुबह आतंकवादियों ने एक ग्रेनेड फेंका था, जो फटा नहीं। हमने उसे हटाया और पहाड़ों पर तलाशी लेकर तीन आतंकियों को पकड़ा है। हमें रात में देखते ही गोली मारने का आदेश है। इसके बावजूद बाबूजी! सरकार हमारी चिंता नहीं करती है। हमारी तनख्वाहें बहुत कम हैं और तीन महीने से तो हमें तनख्वाह ही नहीं मिली है। हम आतंकियों को पकड़ते हैं और सरकार उन्हें छुड़वा देती है। कश्मीर के बड़े–बड़े नेता आतंकवादियों से मिले हैं लेकिन हम उन पर हाथ नहीं डाल सकते। क्या पता कल उन्हीं में से किसी को यहां मिनिस्टर बना दें?''

जवान के दर्द बहुत थे पर हमारे पास उनका कोई जवाब नहीं था। झूठी तसल्ली देते बच्चों (रामू–संजय) (पारीक सा. उन्हें यही सम्बोधन देते हैं) की राह देखते रहे। पास ही एक बजरंग बली का मन्दिर था। वहां संध्या आरती होने लगी। हमने पूरी श्रद्धा से आरती व वन्दना में हिस्सा लिया। आरती करने वाला पुजारी भी बी.एस.एफ. का एक अधिकारी ही था। आरती समाप्ति के बाद प्रसाद ग्रहण किया। मैने पूरी श्रद्धा से भगवान के आगे सिर झुकाकर दोनों बच्चों की शीघ्र वापसी की प्रार्थना की। बिस्तरों पर आकर बैठे पर वहां भी चैन नहीं मिला। मैं पुनः टॉर्च लेकर देखने आया पर वे नहीं आये। दूसरी बार पुनः करीब पौने नौ बजे उन्हें देखने गया तो वे आते हुये मिले। सबने संतोष की सांस ली और खाना खाने की तैयारी करने लगे।

28 रोटी, चार दालफ्राई बस इतना ही खाना दोनों मिलकर ला पाये थे। वे दोनों भी खाना खाकर नहीं आ सके थे। एक होटल पर जाकर दाल फ्राई करवा ली पर रोटियों के लिये छीना–झपटी होती रही। इन्होंने तीस रोटियां मांगी पर होटल वाले ने पच्चीस पर रोक लगा दी। तीन रोटी और जबरदस्ती उठाकर लाये (सबका भुगतान करके)। दूरी भी बहुत थी। वे कहीं नहीं रुके, फिर भी इतना समय लग गया। खैर अब रोटियां खाने की व्यवस्था करनी थी। रोटियां तो प्लास्टिक की थैली में रखी ठीक थी। परन्तु लोटे में रखी दाल को कैसे काम लें? लड्डू के टिफिन का ढक्कन एवं केटली का ढक्कन इस काम आया। देखते ही देखते दाल रोटी खत्म हो गई। कुछ

लड्डू, नमकीन वगैरह भी उदरस्थ किये। इस तरह इस वन भूमि में हमारा भोजन हुआ। भोजन लाने के लिये पारीक सा. ने दोनों बच्चों की बहुत सराहना की।

रामबन से रवानगी

सूटकेस जंगले की सलाखों में जंजीर पिरोकर तालाबंद किये और हम रात्रि विश्राम के लिये लेट गये। सभी को अच्छी नींद आई। रात्रि में मुझे सर्दी महसूस हुई। मैंने एक शॉल तथा एक चद्दर ओढ़ी। प्रातः मुझे सर्दी लगना मेरी मजाक का एक बिन्दु बना। पारीक सा. ने बिना कुछ ओढ़े सोने को अपनी वीरता बताया। हम प्रातः सवा पांच बजे करीब उठ गये थे, तब मामूली उजाला होने लगा था। नहाने के लिये हम एक चश्मे पर गये। भूमि के अन्दर से निकलते रहने वाले साफ पानी के स्त्रोत को चश्मा कहा जाता है। चश्मे पर पाईप लगाकर नीचे बैठकर नहाने की जगह बना रखी थी। बिल्कुल वैसे जैसे हम घर के बाथरूम में नल के नीचे बैठकर नहाते हैं। चश्में पर जाकर हमने पेस्ट किया, मालिश की, तथा साबुन लगाकर नहाये। इसी दौरान हमारे सामने सम्पन्न हो रहे 'बकरा हलाली' को देखकर हम उबकाई भी खाते रहे। चश्में से कोई पचास फुट नदी की ओर एक बड़ा स्टेण्ड बना है जहां बकरे काटने का कार्य हमारे नहाने के समय पर ही सम्पन्न हो रहा था। न चाहते हुये भी निगाहें बार–बार उस तरफ उठ जाती थी। पारीक सा. ने तो कह दिया,

''तुम अपना काम करो, उधर क्यों देखते हो?''

बकरे काटने की क्रिया की पूरी तस्वीर मेरे जहन में ऐसी घुस गई है जो शायद ताउम्र नहीं निकल सके।

नहाकर वापस आते समय मंदिर पर बजरंगबली के दर्शन किये। वहीं हमें रोककर कुछ लोगों ने हलुवे का नाश्ता कराया तथा चाय पिलाई। सभी यात्रियों को व्यक्तिगत रूप से 'भोलेबाबा का प्रसाद ले लो' कहकर आग्रह किया जा रहा था। मैंने बी.एस. एफ. को धन्यवाद दिया। बाद में पता लगा कि नाश्ता सहयात्रियों ने दिया था। वे लोग अपनी एक बस सवारियों के साथ एक ट्रक सामानों से भरा साथ लेकर चल रहे हैं। गत रात्रि को उन्होंने इसी भवन परिसर में भोजन भी तैयार किया था।

'काश वे रात भी खाना खिला देते।' मैंने मन ही मन सोचा। चाय नाश्ते के बाद सबने सामान पैक किये, बस के ऊपर चढ़ाये और अपनी–अपनी सीट पर जा बैठे। हमें सात बजे तैयार होने के निर्देश थे पर बसों ने सार्व. निर्माण विभाग परिसर बनाम सीमा सुरक्षाबल छावनी को आठ बजे छोड़ा। इससे पूर्व बी.एस.एफ. के जवानों ने यात्रियों के पीने के पानी की व्यवस्था में अपने सारे नियम तोड़ दिये। हम यात्रियों को ऐसी जगह से भी पानी लेने दिया गया जहां सुरक्षा की दृष्टि से किसी को नहीं जाने दिया जाता है। सभी सुरक्षा कर्मी बहुत प्रसन्न थे। हमें शुभकामनाऐं दी गई एवं बसें रवाना होने के बाद हाथ हिलाकर विदा भी किया गया। हमारी बस मुख्य सड़क पर आई तब तक वहां टैक्सी, जीप, बसों की लम्बी कतार लग चुकी थी। प्रशासन के आदेश पर बस को कतार में पीछे ही पीछे ले जाकर खड़ा करना पड़ा। हमारी बस रामबन में कोई दो सौ वाहनों के पीछे जाकर लगी। यहां अच्छा बाजार है। गरम नाश्ता, भोजन मिल रहा था। खाने–पीने के सामान बिस्कुट आदि भी थे। हमने कुछ सामान लिया। पास ही मोची बैठा था। अवसर का लाभ उठा हमने अपने फटे हुये दो बैग सिलवा लिये। यहां बसें कोई दो घंटा खड़ी रही। हम समय गुजारने के लिये बस में ऊपर–नीचे टहलते रहे।

रामबन कश्मीर घाटी के पूर्व का एक अच्छा कस्बा है। रामबन जम्मू कश्मीर के डोडा जिले का एक हिस्सा है। यह पीरपंजाल पर्वत माला की ऊंची चोटियों से घिरी घाटी में बसा है। पत्नीटॉप पानी के बहाव को दो भागों में विभक्त करता है। यहां बह रही चिनाब नदी जिस पर्वत

श्रृंखला से निकली वह हमारे रास्ते में नहीं थी। उधमपुर से रास्ता नीचे उतरा। बीच में वापस चढ़ाई शुरू हुई जो कुद होते हुये पटनीटॉप तक जारी रही। उसके बाद रामबन तक सीधा उतार है। रामबन से कुछ पहले ही चिनाब नदी पर एक पुल बना है। जिससे होकर पूरा यातायात गुजरता है। इस पुल से उछाल लेती चिनाब का दृश्य देखना भी अति सुखद है। जिधर निगाह डालो उधर एक किलोमीटर ऊंची चोटियों पर गहन देवदार व चीड़ के वन नैत्रों को शीतलता प्रदान करते है। जैसा यहां का सौन्दर्य वैसी ही निर्मल यहां के लोगों की प्रकृति। यहां हिन्दु–मुस्लिम अनुपात बराबर–बराबर है। जब से कुछ सिरफिरों ने यहां की फिजां को बिगाड़ा है, आपसी भाईचारे में दरार पड़ी है। शांति बनाये रखने के लिये सुरक्षाबल तैनात किये गये। सुरक्षाबलों से मुस्लिमजन ज्यादा परेशान हुये। रामबन में चश्मे पर नहाते हुये कुछ बच्चों से मैंने बात करनी चाही पर वे अनसुनी कर गये। एक बुजुर्ग ने सिर्फ एक शब्द बोला। मैने पूछा,

''बाबा कौन सा दरिया है''।

उसने कहा ''चिनाब'' और चला गया। वह सहमा हुआ नजर आ रहा था। पारीक सा. यहां किसी मुसलमान से बात करने के खिलाफ थे। उन्होंने चेताया,

''जम्मू में तुमने नहीं सुना क्या? घाटी में किसी मुसलमान से बात मत करना नहीं तो वे गोली मार देगें।''

मुझे अब अफवाहों पर यकीन नहीं रहा। ये तो सब वैसे ही सहमे हुये हैं। मुस्लिम ढाबे हों या वैष्णव भोजनालय सभी पर अफरा–तफरी मची थी। सिर्फ दस दिन का मेला है यह, बाकी साल भर तो हाथ पर हाथ धरे बैठना ही है। उग्रवाद के कारण पर्यटकों का आना लगभग बंद हो गया है। कमाई की कमाई और स्वधर्म, स्वदेश का अभिमान, कश्मीरी हिन्दुओं को तो दोहरी खुशी थी।

बनिहाल में

रामबन से कारवां काफी देरी से रवाना हुआ। रामसू गांव तक, कोई 24 कि.मी तक रास्ता चिनाब नदी के बहाव के साथ चला। चिनाब नीचे उतर रही है और सड़क ऊपर चढ़ रही। इस प्रकार चिनाब से काफी ऊपर पहुंच गये। वहां टॉप से हमारा रास्ता बाईं ओर मुड़ गया जहां एक जलधारा के सहारे रास्ता बढ़ता गया। रामसू व बनिहाल के बीच भी एक दो जगह रास्ता खराब था। हमें दस–पांच मिनट से ज्यादा कहीं रुकना नहीं पड़ा परन्तु बनिहाल पहुंचकर हमें रोक दिया गया। हमारी बस के आगे कोई पचास बसें, पच्चीस–तीस टैक्सियां थी और पीछे कोई दो किलोमीटर लंबी वाहनों की कतार। रामबन से बनिहाल पूरे रास्ते सौ–सौ कदम पर सुरक्षाबल जवान रायफलें लिये तैनात खड़े थे। बसों के यात्री नारे लगाकर एवं हाथ ऊंचे करके उनका मनोबल बढ़ा रहे थे। सभी जवान भी हाथ हिला–हिलाकर अभिवादन कर रहे थे। सबके चेहरे पर बहुत प्रसन्नता एवं संतोष नजर आया। बनिहाल हमें कोई दो घंटे रोका गया। यह रोक विशुद्ध सुरक्षा कारणों से थी। बनिहाल में साफ पानी के तीन झरने बहते है। यात्रियों ने अवसर का भरपूर लाभ उठाया। सभी झरनों पर यात्री नित्यकर्मों से निवृत होते नजर आये। इन्हीं झरनों पर यात्रियों ने जमकर स्नान का आनन्द भी लिया। बनिहाल हम करीब ग्यारह बजे पहुंचे थे। सुरक्षाबलों से बात करने पर मालूम हुआ कि बारह बजे कारवां रवाना होगा। कुछ लोग कह रहे थे कि एक बजे निकालेंगें, बड़े अफसर से बात हुई है। इस तरह सभी यात्री समय के प्रति कुछ निश्चिंत थे। भोजन का समय भी हो गया था परन्तु हम खाना खा सकें ऐसा ठीकठाक शुद्ध शाकाहारी ढाबा कहीं नजर नहीं आया। चार–पांच गंदे से ढाबे थे, उन पर दाल–चावल खाने के लिये पच्चियां पड़ रही थी। यहां मक्का के भुट्टे, नाशपति एवं सेवफल मिल रहे थे। दो घंटे की मशक्कत के बाद एक भुट्टा खरीद सके। सेव, बिस्कुट वगैरहा के साथ हमारा अपना नाश्ता खाकर भोजन का कोरम पूरा किया। पीने के पानी की कमी नहीं थी। चश्में का पानी सभी यात्रियों ने पीया एवं अपनी केटलियां–बॉटलें भरी। स्थान अच्छा पिकनिक स्पाट है और हमने पिकनिक मनाई भी सही पर

विभिन्न दुश्चिंताओं के साथ। यात्रियों की मेहरबानी से यह खूबसूरत जगह संडास घर में तब्दील हो गई। कोई जगह रोड़ के आसपास दरिया के किनारे ऐसी नहीं बची जहां गंदगी न हो। यात्रियों ने इस गांव के दरियाओं के किनारे बैठ, बीड़ी, सिगरेट, शराब पी, ताश से जुआं तक खेला। हम छः साथी आपसी तालमेल के अभाव में ज्यादा आनन्द नहीं उठा सके।

बनिहाल रामबन व जवाहर टनल के बीच का प्रमुख कस्बा है। यहां आबादी का अनुपात मुस्लिम सम्प्रदाय के पक्ष में है। गांव के अंदर यात्रियों के जाने पर प्रतिबंध था। गांव के अंदर से मुख्य सड़क की ओर आने वाली गलियों पर बंदूकें तैनात थी। कुछ होटलों के अलावा इक्का–दुक्का दुकानें ही खुली थी। सभी प्रायः मुस्लिम संप्रदाय की नजर आई। फालतू बैठे मैं व हरिमोहन एक फल विक्रेता से बतियाने लगे। गये तो फल खरीदने थे परन्तु फल पसंद नहीं आये। अतः उसके पास ही खाली जमीन पर बैठ गये। लड़का सोलह साल करीब का मुस्लिम था। दसवीं कक्षा में पढ़ रहा है। उसने अपना नाम जाति भी बताई वे मुझे ध्यान नहीं रहे। हमने बातों का रूख कश्मीरी आतंक व राजनीति की ओर मोड़ना चाहा पर उसने अत्यन्त सावधानी से संक्षिप्त जवाब ही दिये। उसके अनुसार वह किसी पार्टी को नहीं जानता और न ही वह तथा उसके परिवार के किसी पार्टी से संबंध हैं। जे.के.एल.एफ., नेशनल कांफ्रेस, जम्मू कश्मीर हुर्रियत कांफ्रेस आदि पार्टियों के नामों से उसने एकदम अनभिज्ञता प्रकट की।

''फसाद क्यों हुये?''

''बाहर के आदमी आते है। वे करते है दंगा। यहां का कोई नहीं करता''।

उसके पिताजी खेती करते है। उनके पास चालीस बीघा जमीन है। आज जो फसल बेचने लाया है वह दूसरे के बाग से खरीदकर लाया है। भारत के साथ रहना चाहते हो या स्वतंत्र या पाकिस्तान के साथ ऐसे तीखे सवालों का कई बार पूछने पर भी उसने कोई जवाब नहीं दिया। सन् 1986 में भी मै कश्मीर आया था। काजीगुंडा में एक अखरोट विक्रेता से मैने ऐसा ही सवाल पूछ लिया था।

'तुम पाकिस्तानी हो या हिन्दुस्तानी।'

उसने तिलमिलाते हुये जवाब दिया था,

'हम कश्मीरी हैं' और फिर नाराज होकर बोला था, 'पाकिस्तानी से मिलना है क्या? यहां पाकिस्तानी भी है पर उनसे तुम इस तरह बात नहीं कर पाओगे।'

उस समय मेरे साथी लोगों ने उससे क्षमा मांगी और मुझे डांटा था। यहां इस समय यह बच्चा छोटा है फिर सुरक्षाबलों से घिरा, आतंकित, मुझे वैसा जवाब नहीं दे पाया।

जवाहरटनल

बनिहाल से साढ़े बारह बजे करीब छोटी गाड़ियों को आगे भेजा गया। यात्री बसों के लिये हरी झंडी डेढ़ बजे मिली। एक मिलेट्री की छोटी गाड़ी (मेटाडोर टाइप) आई। गाड़ी में चार–पांच जवान स्टेनगन लिये एकदम चौकस तैनात थे। स्टेनगनों के मुंह विभिन्न दिशाओं में थे। उसमें सेना के दो बड़े अफसर बैठे थे। आठ–दस जवान और कुछ पेटियां सम्भवतः हथियार उसमें रखे थे। वे जवाहर टनल की ओर से आये थे। उन्होंने बढ़ने का इशारा किया। इसके बाद गगनभेदी नारों की आवाज में शंकर भगवान को याद किया गया। सीटी बजी और मिलेट्री की गाड़ी के पीछे–पीछे बसें लाने का आदेश हुआ। हमने जयघोष किया और यात्रा शुरू कर दी। यहां से सेना का सख्त पहरा शुरू हुआ। सुदूर ऊंची पहाड़ियों पर बंकर, तंबू व उनमें मोर्चे संभाले बैठे सेना के जवान। सभी हाथ हिला–हिलाकर अभिवादन कर रहे थे। इधर सभी बसों में से भी यात्रियों के खिड़की से बाहर निकलते हुये हाथ हिल रहे थे। पांच–सात किलोमीटर बाद ऊंचाई पर जाकर बसें रुकी, वहां कई यात्रियों ने पानी पीया। हमने कैमरा निकालकर दो–तीन फोटो लिये। सामने से आने वाली गाड़ियों का एक बड़ा काफिला गुजरा। सुनने में आया जवाहर टनल आ रही है। पहले उधर की गाड़ियां

निकाली है। अब इधर की निकालेंगे। यहां सिर पर मंडराता हेलिकॉप्टर नजर आया। अखबारों में पढ़ा था कि अमरनाथ यात्रा की सुरक्षा प्रबंध में हेलिकॉप्टर का इस्तेमाल किया जावेगा। शायद यह वही व्यवस्था थी। इसके बाद हमें मार्ग में कई बार हेलिकॉप्टर मंडराते नजर आये। जवाहर टनल तक एक–दो बार और बसें रूकी। जवाहर टनल पर हमारे ड्राइवर ने बस गलत तरह से खड़ी कर दी और हम काफी पीछे हो गये। रामू ने बगल से घुसती एक बस में बारां के लड़के होने की बात कही। हम काफी देर तक बस को देखते रहे व इशारे करते रहे न हम न वे किसी को पहचान सके। दूसरी बस के एक यात्री ने पूछा ''कहां के यात्री है?''

मैंने कहा ''पूरे हिन्दुस्तान के हैं।''

थोड़ी देर बाद बगल वाली बस आगे बढ़ गई। यहां सुरक्षा में एक टैंक भी खड़ा था। सेना के जवान यात्रियों को पानी पिला रहे थे। जो भी यात्री बर्तन भरवाता जवान मुस्तैदी से उसे भरकर बस पर पहुंचाते। नारेबाजी भी बहुत हो रही थी।

जवाहर टनल 2758 मीटर लम्बी सुरंग है इसमें दो ट्यूब (रास्ते) हैं पर उस समय एक ही रास्ता चालू था। इस टनल के बनने से 36 कि.मी. बस का रास्ता कम हुआ। टनल से पूर्व बसें कोई दो हजार फीट ऊंची पहाड़ी को घुमावदार रास्तों से पार करती थी। पुराने रास्ते के अवशेष अभी नजर आते हैं। सुरंग के अंदर रोशनी के लिये मर्करी बल्ब लगाये गये है। दोनों ओर संचार, बिजली, पानी की लाइनें बिछी हुई है। सड़क पर ऊपर से पानी टपकने के कारण हमेशा गीला रहता है। पानी बहाव के लिये सड़क के दोनों और नालियां बनी हुई है। यात्रियों को बस में यात्रा करते समय सिर्फ सामने वाली बस नजर आती है। पौने तीन कि.मी. लम्बी सुरंग की यात्रा भी रोमांच पैदा करती है। पूरी सुरंग में यात्री पुरजोर जयघोष करते रहे। हमने बस की खिड़कियां बंद नहीं की थी अतः बसों का धुंआ हमारी आंखों में घुस जलन पैदा करने लगा। सुरंग से बाहर निकलते ही जैसे राहत की सांस मिली हो।

धरती के स्वर्ग कश्मीर घाटी में

टनल के आगे उतार शुरू हो जाता है। यहीं से शुरू होती है, दुनिया की स्वर्ग कहलाने वाली जगह कश्मीर घाटी। नीचे उतरते–उतरते आसपास पहाडियों से घिरे विशाल हरे–भरे मैदान नजर आने लगते है। सीढ़ीदार खेतों पर पसरे मक्का के खेत, सेव, नाशपती अनार के बगीचे। हमारी बसें पहाड़ी रास्ते पर एक जगह कोई पेंतालीस मिनट रुकी। वहां के सौन्दर्य पर रीझ कर फोटोग्राफी की। वहां से एक–एक बस, नम्बर नोट कर करके, आगे बढ़ाई गई। यहां बस की खिड़कियां बंद रखने की हिदायत दी गई। सत्यप्रकाश ने जानकारी दी कि यहां सबसे ज्यादा खतरा है। मैंने भी पिछले वर्ष अखबार में पढ़ा समाचार सब को सुनाया। गतवर्ष अमरनाथ यात्रा की वापसी पर इसी स्थान पर आतंकवादियों ने एक बस पर हमला किया था। ड्राईवर टायर पंचर होने तथा स्वयं घायल होने के बावजूद बस को जवाहर टनल तक ले गया। इस तरह सभी यात्रियों की जान ड्राईवर की बहादुरी से बची। पिछले गणतंत्र दिवस पर उस ड्राईवर को राष्ट्रपति ने बहादुरी का पुरस्कार दिया था। गत वर्ष अमरनाथ यात्रा पर आये मेरे छोटे भाई दिनेश एवं उसके साथियों की जीप उस बस से कुछ पीछे ही चल रही थी।

मैदानी इलाके में एक जगह पुनः जाम लगा। यह स्थान काजीगुंड़ा के आगे है। काजीगुंड़ा कस्बा हमने तेज रफ्तार से चलती बसों में बैठे–बैठे ही देखा था। पूरा बाजार बंद था तथा गांव एकदम सुनसान। कुछ लोगों की मान्यता थी कि कर्फ्यु लगाया गया है। मेरे जैसे कुछ लोगों ने माना कि हड़ताल की गई है। काजीगुंड़ा से आगे जहां हमारी बसें खड़ी थी एक अच्छा सेव का बगीचा था। यात्रियों को लगा कि बसें कुछ ज्यादा देर रुकेंगी तो वे बसों से उतर पड़े। आसपास खड़े सुरक्षाकर्मियों ने यात्रियों को रोका पर कोई नहीं माना। कुछ हनुमान जी के भक्त बाग में पहुंच गये और सेव तोड़कर जेबें भरने लगे। देखादेखी पचासेक जवान यात्री अशोक वाटिका उजाड़ने हेतु टूट पड़े। बाग का मालिक वहीं था। उसने पहले यात्रियों के हाथ जोड़े, फिर अत्यन्त विनम्रता से

एक सेनाधिकारी से इन्हें रोकने का अनुरोध किया। सेनाधिकारी ने साधारण शब्दों में यात्रियों से मना किया पर साथ ही वह हंसता भी रहा। इतने से टोकने से भला कौन मानता? हमारे रामू व संजय भी वानर दल में शामिल हो गये। पेड़ों पर चढ़कर जोर–जोर से डालियां हिलाकर सेव पेड़ों से नीचे गिरा दिये गये। बसें चलने तक जितने बीनने में आये यात्री बीन कर ले आये, बाकी पीछे आने वाली बसों के यात्रियों के लिये छोड़ दिये। अफगानों सी दाढ़ी वाला वह कश्मीरी प्रौढ़ अपने चमन को उजड़ते हुये असहाय देखता रहा। उसने अपने चेहरे पर गुस्सा या मुंह पर गाली नहीं आने दी। क्यों? आगे यह बात हमारे सामने स्पष्ट होती चली गई। मैं इसे चोरी का माल बता कर खाने से मना करता रहा। अंत में मुझे समझाया गया, 'यह चोरी का नहीं सीनाजोरी का माल है।' मैंने दो सेव डकारे। अपने एक सिद्धान्त को तोड़ कर। मुझे क्या पता था इस यात्रा में मेरा एक भी सिद्धान्त सही सलामत नहीं बचेगा? यह समय–समय पर लिखूंगा।

बसें आगे बढ़ी और एक डीजल–पैट्रोल पंप के आसपास रास्ता जाम होने के कारण रुकी। हमारी बस में डीजल पर्याप्त था अतः रास्ता बनते ही हम काफी आगे हो गये। खन्नाबल के पूर्व एक बार पुनः हमारे से बस की खिड़कियां बंद करवाई गई। अनन्तनाग चौराहे पर हमें कुछ मिनट रूकना पड़ा। एक मिलेट्री अफसर बोला, ''क्या सूम की तरह जा रहे हो? नारे लगाओ।''

खिड़कियां बंद होने से जो यात्री आशंकाओं में डूबकर चुप हो गये थे उनमें नया उत्साह भर गया। फिर तो पूरा अनन्तनाग बम भोले के जयकारों से गूंज उठा। अनन्तनाग जिला मुख्यालय जहां तक हमारी दृष्टि गई, पूरी तरह बंद था। वहां विचरण करते कुछ लोगों को देखकर यहां कर्फ्यू न होने की पुष्टि हुई। आठ दिन पहले इसी अनन्तनाग की किसी ऐतिहासिक तीन मंजिली बिल्डिंग से अमरनाथ यात्रियों की एक बस पर गोली चली थी। अखबार से मिली जानकारी के अनुसार सुरक्षाबलों ने तुरंत मोर्चाबंदी कर उग्रवादियों को काबू में किया। इस हमले में एक तीर्थयात्री घायल हुआ था। सुरक्षाबल के एक जवान से मिली जानकारी के अनुसार गोली यात्री के कान को बींधती निकल गई थी। अनन्तनाग बहुत बड़ा शहर है। मेरी निगाहें पूरे अनन्तनाग में उस संभावित आक्रामक भवन की तलाश करती रही पर मैं वह भवन पहचानने में असमर्थ रहा। अनन्तनाग से मुख्य रास्ता श्रीनगर की ओर जाता है। अभी तक हम जम्मू श्रीनगर राजमार्ग पर यात्रा कर रहे थे। अब बसों ने राजमार्ग छोड़कर पहलगांव का मार्ग पकड़ा। कुछ दूर तक सड़क सही थी। बाद में अपने गांव जैसा खराब रोड़ आ गया। अनन्तनाग से पहलगांव तक सारी बसें द्रुतगति से बढ़ी। पूरा इलाका मैदानी निकला। मेरी कल्पना मुझे बार–बार पहाड़ों की ओर ले जा रही थी। इस रास्ते पर कई छोटे–छोटे गांव नजर आये। इन गांवों में जीवन के कुछ चिन्ह भी दिखाई दिये। नहर में बर्तन व कपड़े धोती महिलायें, बसों को घूर–घूर कर देखते बच्चे, बूढ़े व महिलाओं के झुंड। गांव की इक्की–दुक्की खुली हुई दुकानें और उन पर खरीददारी करते लोग। इस रास्ते पर सिख समुदाय की ठीक तादाद होने का भी अहसास हुआ। कई जगह गुरूद्वारे दिखाई दिये। सिख बच्चे, औरतें निश्चिंत होकर घूमते व अपने काम में लगे नजर आये।

बस में से हाथ हिलाकर टाटा करने का सिलसिला बनिहाल से शुरू हुआ था वह पहलगांव तक जारी रहा। मेरा दायां हाथ खिड़की से बाहर निकाल कर ऊंचा करते–करते दर्द करने लगा। पहले हम सुरक्षाकर्मियों का ही अभिवादन करते थे। बाद में हमने कश्मीरी जनता से भी अभिवादन करना शुरु कर दिया। मैंने पारीक साहब से कहा, ''देखो कश्मीरी जवाब दे रहे है।''

उन्होंने कहा, ''वे जवाब नहीं दे रहे, वे दो उंगलियां बता रहे हैं। मतलब तुम्हें देख लेंगे। थोड़ा ध्यान से देखो।'' जब मैने कश्मीरी लोगों की भावभंगिमा पर गौर करना शुरू किया तो वह पारीक सा. की बात को सही ठहरा रही थी। सिर्फ अबोध बालक या वृद्ध ही सही तरीके से अभिवादन कर रहे थे। स्कूल जाने वाले बालक दो अंगुलियां उठाकर इस तरह दिखाते थे जैसे हमारी आंखें फोड़ देंगे। समझदार जवानों के चेहरों पर नाराजगी थी। वे कोई जवाब नहीं दे रहे थे। अल्हड़ किशोर अक्सर मुक्का या थप्पड़ बता देते थे। एक दो जगह तो मुझे ऐसा लगा जैसे वे अश्लील इशारे कर रहे हों। क्या इस घाटी में बालकों को घुट्टी के साथ नफरत करना सिखाया

जा रहा है? क्या कश्मीरी जवानों के दिलों में आतंकवादियों ने कब्जा जमा रखा है। वे भला उनके चैलेंज को स्वीकार कर, उनकी छाती पर मूंग दलने आये हम यात्रियों को देखकर कैसे खुश होते?

पहलगांव

पहलगांव पहुंचते–पहुंचते सूर्य छिप गया था। पहलगांव इतना खूबसूरत शहर, इतनी बड़ी–बड़ी दुकानें, दमकते तीन–तीन मंजिले होटल, परन्तु सब बंद। सड़कों पर दो–चार आदमी दुकानों के खाली थड़ों पर बैठे नजर आये। सूनी–सूनी नजरों से बसों को निहारते। हर गली–कूंचों पर पहरा था लेकिन घूमते बच्चे, मकानों के झरोखों एवं खिड़कियों से झांकती महिलायें, यहां कर्फ्यू तो नहीं था। सभी बड़ी–बड़ी दुकानों पर बहुत छोटे–छोटे ताले लटक रहे थे। लगता था दुकानें खाली है। इनमें माल नहीं है या फिर यहां चोरी–चकारी का डर नहीं है। कश्मीर घाटी की एक और विशेषता देखी। पूरी घांटी में कहीं भी मकानों की खिड़कियों में लोहे के सरिये लगे हुये नहीं थे। हमारे इलाके में तो रोशनदान तक में लोहे की जाली या सरिये होते है। पहलगांव में सूने मकानों, होटलों के चौक, आंगन में सुसज्जित फुलवारी व कटी घास देखकर आभास हुआ कि दस–पन्द्रह दिन पहले तक यहां सब सही था। अखबारों में छपी खबर कि पहलगांव के निवासी यात्रा पर उग्रवादियों द्वारा लगाये प्रतिबंध से बहुत दुखी हैं, सही साबित हो रही थी। यहां के निवासी यात्रियों के स्वागत की तैयारी में अंत तक लगे रहे लेकिन उग्रवादियों द्वारा प्रतिबंध न हटाने पर उन्हें मन मारकर दुकानें, होटल बंद करने पड़े। पहलगांव के बीचों बीच बाजार में बस दस मिनट के लिये रुकी। मैं अन्य यात्रियों के साथ नीचे उतर पड़ा। सड़क के किनारे बैठे एक युवक से पूछा, ''भाईजान! आज बाजार कैसे बंद हैं।''

उसने कहा, ''पता नहीं।''

दूसरे प्रौढ़ से पूछा। वह बोला, ''अब इधर धंधा तो रहा नहीं, सब नीचे चले गये।''

मैंने व सहयात्रियों ने उससे तर्क देकर बहस करनी चाही पर वह अपनी गोलमगोल बातों से आगे नहीं बढ़ा। हमारे यह कहने पर कि तुमने उग्रवादियों के डर से दुकानें बंद कर रखी है– वह कुछ नहीं बोला। साफ बात थी, अब कल भी बाजार नहीं खुलेगा।

हमारे होटल में सोने व जमकर खाना खाने के सपने सब चूर हो गये। समाचार माध्यमों से पता लगा था कि पहलगांव के निवासी यात्रा में सहयोग करने लगे हैं लेकिन कितना? यह प्रत्यक्ष देखने पर ही जान सके। हमारी पार्टी को रास्ते में नाश्ते के लिये कुछ ड्राइफ्रूट्स खरीदने थे। बारां से सोचा कोटा से ले लेंगे। इधर कोटा भी स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष में बाजार बंद थे। जम्मू हम दिन में रुक नहीं पाये, आखरी उम्मीद पहलगांव भी बंद मिला। बस, बसों के लिये निर्धारित स्थान की ओर बढ़ने लगी। किसी यात्री के समझ में नहीं आ रहा था, कहां उतरे। वहां खड़े सेना के एक जवान ने कुछ इशारा किया कि इधर ठहरने की व्यवस्था है। सारे यात्री वहीं बस रोक उतर पड़े। हम सामान उतारने के बाद पारीक सा. के आदेश से कोई आधा घंटा खड़े रहे। पहले पूछताछ व जानकारी की गई। तत्पश्चात् सामान उठाकर चलने के आदेश हुये। सामान उतारते ही दो कुली आ गये थे। उन्होंने आते ही कह दिया था कि कैम्प में चलो, पांच रूपया प्रति नग लेंगे । मैंने उनसे होटल के लिये पूछा जो सब बंद थे। और ठहरने की जगह के बारे में कहा तो बोला, 'पचास रूपये प्रति व्यक्ति लगेगा, कमरा दे देंगे। हमारे अपने मकान में।' मैंने अपने साथियों की तरफ निगाह उठाकर देखा, किसी ने भी इस बात का समर्थन नहीं किया। एक होटल कोई दो किलोमीटर आगे खुला बताया गया। जिसका किराया 300 रु. कमरा था परन्तु खाली मिलेगा या नहीं, पहले देखकर आओ। थके हारे, बिना कोई साधन, इतनी दूर जाने के बारे में हममें से कोई सोच भी नहीं सका।

होटल फाइवस्टार

पारीक सा. इन्क्वायरी करके आये और उन्होंने आते ही कहा, ''इधर तंबू लग रहे है, वहां चलना है।'' कुलियों की रेट बताते ही उन्होंने सामान उठा लिये और कहा,

''चलो–चलो, इतनी सी दूर के पांच रूपये देंगे क्या? हम ही ले जायेंगे भैया।''

शुरू में हम सभी को पारीक सा. की बात अच्छी लगी पर तम्बू तक पहुंचते–पहुंचते सब के छक्के छूट गये। पांच रूपये प्रति नग तो बेचारे वाजिब ले रहे हैं। यहां गेट पर भारी भीड़ थी। जरा सा गेट खुला था एवं एक–एक व्यक्ति तलाशी देकर अंदर जा रहा था। व्यक्तिगत तलाशी के बाद सामानों पर भी मेटल डिक्टेटर लगाया गया। हमारे बैग में मूंग के लड्डू का स्टील का डिब्बा रखा था। मेटल डिक्टेटर ने शोर मचाया। बैग खोल कर सुरक्षा अधिकारियों को लड्डू सुंघाने पड़े। सामान बीच रास्ते में रखकर व्यवथाओं की जानकारी प्राप्त करने में जुट गये। पंद्रह मिनट बाद मालूम पड़ा कि जहां जगह मिले वहां जम जाओ। दो प्लास्टिक शीट व दरियां लेकर रामू व संजय जगह ढूंढने में जुट गये। एक दरी लेकर कुछ देर बाद पारीक सा. भी चले गये। काफी देर तक दोनों पार्टियां नहीं आई तो हम थोड़ा आगे बढ़ गये। इस तरह घंटा भर और गुजर गया। थोड़ा सा स्थान च्युत होने से पारीक सा. हमें नहीं ढूंढ पाये। मैं अंदाज लगा कर पुरानी जगह पर निगाह डालने गया तो पारीक सा. क्रोधित मुद्रा में थे।

''तुम लोगों में अनुशासन बिल्कुल नहीं है। यहीं मिलना चाहिये था।''

मैने पूछा, ''जगह मिल गई क्या?''

''जगह तो शानदार मिली है, फाइवस्टार होटल की सी''।

पारीक सा. की वाणी सहज थी। अतः हम प्रसन्नतापूर्वक सामान उठा पारीक सा. के पीछे–पीछे बढ़ने लगे। अब तक अंधेरा घिर गया था। रोशनी के लिये हमने टॉर्च निकाल ली। तम्बूओं को पीछे छोड़ते, पर्यटन विकास निगम के मुख्य भवन में पहुंचे। बेतरतीब सोये हुये यात्रियों को लांघते एक बरामदे के आखरी कोने में पहुंचे। आठ फुट लम्बी जगह थी। बरामदा भी यही आठ–नौ फुट चौड़ा था। मुख्य दीवार के सहारे दूसरे यात्री थे। खुली साइड पर हम। छः आदमी लेट तो जावेंगे पर सिर्फ चार फुट जगह ही पैर फैलाने के लिये मिलेगी। इतनी भारी भीड़ लोग खुले में ही आसन जमा रहे हैं। हमें छत तो मिली हुई है। हमारा फाइवस्टार अस्पताल के बरामदे में था। अस्पताल के वार्ड का दरवाजा बरामदे की चौड़ाई में खुलता था तथा उस वार्ड से कोई आठ नौ फीट डाक्टर ड्यूटी रूम का दरवाजा खुलता था। दोनों दरवाजों से रात भर आवागमन रहने की संभावना थी। ऐसे में हमारे पास लेटने के लिये कितने फीट जगह बचेगी? अब व्यवस्थायें देखनी थी। यात्रियों से भरी गैलरी व आंगन पार करने में पंद्रह मिनट से कम नहीं लगते। टॉर्च ले जानी पड़ती है। जरा सा चूकने पर सोये हुये यात्रियों की टांगो से टकराकर गिरने या किसी के शरीर पर पैर रखने में आने का पूरा अंदेशा रहता है। पैर रखने के लिये जगह देखकर, जगह न हो तो 'प्लीज रास्ता दीजिये' कहकर जगह बनाकर ही गैलरी एवं चौक पार किया जा सकता है। बिल्डिंग से बाहर निकल, आम हिन्दुस्तान की तरह कहीं भी पेशाब कर सकते थे। लोटा साथ हो तो थोड़ी आड़ या अंधेरा देखकर दीर्घशंका से भी निवृत हो सकते थे। पानी के नल की व्यवस्था इससे थोड़ी आगे थी जो हमें आधा घंटे पूछताछ करने व टॉर्च से ढूंढने के बाद मिल पायी।

पहलगांव में हड़ताल थी अतः बाजार पैदल ही जाना था। बाजार भी बंद था। खाना खाने के लिये एक मात्र साधन लंगर ही था। लंगर वही आधा किलोमीटर दूर, जहां हम बस से उतरे थे, उसी चौराहे पर लगे थे। पहले हमने केटलियां, बाटलें तथा लौटा पानी से भरा। पारीक सा. हमारे दो साथियों को लेकर लंगर पर खाना खाने एवं हमारे लिये खाना लेने चले गये। आखिर रात के साढ़े आठ बज चुके थे। लंगर तक जाने में आधा घंटा, आने में आधा घंटा लगना था। हम सामान छोड़कर सारे नहीं जा सकते थे। दो शिफ्ट में जाने में रात के ग्यारह बज जाते। मैंने पहलगांव में हमारी विश्राम स्थली फाइवस्टार पहुंच कर अपने आप को बीमार घोषित कर दिया। मुझे बुखार व

दस्त ने तोड़ दिया है। अक्सर यात्राओं में मुझे यह बीमारी हो जाती है। गोलियां साथ थी, एक खुराक रामबन, एक खुराब बनिहाल और आखरी खुराक अभी साढ़े नौ बजे पहलगांव में ली है। आज सारे रास्ते नाममात्र का खाया था। दिनभर की थकान, रात्रि तक चक्कर से आने लगे। साढ़े दस बजे हमारे लिये खाना आया। लोटे में गाढ़ी–गाढ़ी आलू छोले की सब्जी और मोटी–मोटी आठ पूरियां। मैं तो थोड़ी सी सब्जी और मात्र आधी पूरी खा पाया। पूरियां तो साथियों ने खा ली पर सब्जी काफी सारी फेंकनी पड़ी। लंगर का माल खाने में वैसे ही आत्मग्लानि हो रही थी। फिर मुझे जिसने पार्टी या घर कहीं झूठन नहीं छोड़ी थी, इतनी सब्जी फेंकते बहुत दुःख हुआ। अंत में बर्तन धोने व पानी लेने मैं ही गया। बारी–बारी से सभी साथी दो–एक बार विभिन्न कामों से बाहर जा चुके थे और अब कोई जाना नहीं चाहता था। बाहर जाकर लोटा मांजा। सभी बोतलें आदि पानी से भरी तथा वापस आया। तब तक साढ़े ग्यारह बज चुके थे। तम्बूओं व भवनों में ठहरे अधिकांश यात्री सो चुके थे। हम सब भी कुछ तिरछे हो एक दूसरे से चिपक कर सो गये।

अमरनाथ यात्रा के इस आधार शिविर पहलगांव में भारी भीड़ थी। प्रशासन के अनुमान से काफी अधिक यात्री यहां आये हुये थे। प्रशासन ने तम्बूओं के अतिरिक्त कंबलों की व्यवस्था भी की थी। हमारे पहुंचने तक तम्बू तो भर ही गये थे, कम्बल भी समाप्त हो चुके थे। प्रशासनिक अधिकारियों में अफरातफरी मची थी। यात्री तम्बूओं के अतिरिक्त बरामदों, खुले स्थानों, बसों, टैक्सीयों तक में सो रहे थे। सुरक्षा की सोची समझी योजनायें व्यर्थ हो गयी थी। सभी यात्री समय गुजारने के लिये बतिया रहे थे। इससे कई नई घटनायें व अफवाहें सामने आ रही थी। एक कुली ने मुझे पचास रूपये प्रति व्यक्ति के हिसाब से अपने घर रुकने का प्रस्ताव किया था। अच्छा हुआ हम नहीं गये। कोई आठ रोज पहले इसी तरह रुके हुये चार यात्रियों के साथ कमरे में घुसकर मारपीट की गई एवं लूटा गया। कमरा गुण्डों द्वारा बाहर से बंद कर दिया गया। जवान यात्री जान बचाने हेतु खिड़की से नीचे कूदे और सड़क पर आकर उन्होंने पुलिस से मदद मांगी। जे.के.पी. ने उन्हें डांट डपट कर भगा दिया। वे शिविर में गये और उन्होंने मिलेट्री वालों को सारी दास्तान सुना दी। मिलेट्री ने मकान पर छापा मारा। तीन लोगों को पकड़ा और यात्रियों का माल असबाब निकलवाया। घटना की हम पुष्टि नहीं कर पाये। पूर्व में लिख चुका हूं कि कश्मीर घाटी में जंगलों (खिड़कियों) में कहीं भी लोहे की सलाखें नहीं लगाई जाती ।

पूरे पहलगांव में यात्रियों के खाने के लिये विभिन्न स्थानों के धर्मात्मा लोगों द्वारा चार लंगर लगाये गये थे और कोई व्यवस्था खाने पीने की नहीं थी। पारीक सा. लंगर की ओर खाना लाने जाने लगे तो मैंने ग्लानी से कहा,

''क्या अब हम लंगर का खायेंगे?''

''मत खाओं भूखे मरो।'' पारीक सा. ने जवाब दिया।

''लंगर वाले दान पेटी तो रखते होंगे।''

''मुझे तो नजर नहीं आई, तू ढूंढ लेना।''

मैं चुप हो गया। मैं वैद्यनाथ धाम एक वर्ष पूर्व गया था। वहां भी दानी सज्जन कावड़िया यात्रियों की सभी प्रकार से सेवा करते थे। हर सेवा केन्द्र पर दान पेटी होती थी। हम सेवा का लाभ उठाते एवं उचित मूल्य डाल देते। अमरनाथ आते वक्त दीनू (अमरनाथ रिटर्न) ने बताया था कि यहां बाजार की अपेक्षा लंगरों पर अच्छा खाना मिलेगा। तब भी मेरे दिमाग में यही कल्पना थी कि खाओ और मूल्य दान पेटी में डालो। परन्तु इस अमरनाथ यात्रा पर लगे लंगरों में कहीं भी दानपेटी की व्यवस्था नहीं दिखाई दी। नेकी कर और दरिया में डाल। यात्रियों की भारी संख्या और चार लंगर। सभी लंगरों पर लम्बी–लम्बी कतारें लगी थी। हमारे साथियों को भी कोई आधा–पौन घंटा पंक्ति में लगना पड़ा। भोजन भी सीमित मात्रा में दिया जा रहा था। एक व्यक्ति को दो पूरी। झूठ बोल कर ज्यादा खाना लाना पड़ा था। यात्रा जैसे पवित्र उ(ेश्य में भी पापी पेट के खातिर न जाने क्या–क्या करना पडा? रात 10 बजे मुझे खाना देकर पारीक साहब लघुशंका हेतु बाहर जा रहे थे तो उन्हें एक प्रौढ़ दम्पत्ति मिले। वे दर्शन करके लौट रहे थे। पारीक साहब ने उनसे जानकारी ली। उन्होंने बुझी–बुझी आवाज में बताया कि ऊपर भारी ठण्ड है तथा ओढ़ने–बिछाने की

व्यवस्था मिलना मुश्किल है। उन्हें पिछली रात खुले में बितानी पड़ी थी। जिससे उनके हाथ पैर बर्फ की तरह जम गये। उन्होंने सलाह दी कि आप जितने ज्यादा से ज्यादा ओढ़ने–बिछाने के सामान ले जा सको, ले जावो। इसी तरह एक साधु ने पारीक साहब को शेषनाग में सुरक्षा बल के कैम्पों के आगे अगली पहाड़ी पर लगे प्रधान साहब के विशाल भण्ड़ारे की जानकारी दी। इन सूचनाओं से हमें आगे बहुत मदद मिली।

रामबन की अपेक्षा पहलगांव बहुत ज्यादा ठंडा है। आसपास के ऊंचे पहाड़ों पर कई जगह बर्फ नजर आती है। सभी साथी गरम कपड़े पहनकर सोये। गरम शाल, चादर आदि सभी का ओढ़ने में उपयोग किया गया। सर्दी के कारण तो नहीं पर अन्य कारणों से हम रातभर ढंग से नहीं सो सके। नीचे से आनेवाली यात्री बसें तो सब करीब आठ बजे तक आ चुकी थी परन्तु ऊपर से आने वाले (अमरनाथ यात्रा करके लौटने वाले) यात्री रात देर तक आते रहे। अस्पताल के डा. ड्यूटी रूम के दरवाजे के सामने भी यात्रियों के बिस्तर लग गये। अस्पताल के डॉक्टर जब भी ड्यूटी रूम से वार्ड में जाते–चिल्लाते जाते,

'यहां से उठो, अस्पताल का रास्ता छोड़ो।'

हमारी टांगे वार्ड की ओर जाने वाले रास्ते को रोकती थी। हमें भी कई बार रास्ते में टांगे फैलाने के लिये कोसा गया। रात में एक तीर्थयात्री महिला मरीज आई जिसे वार्ड में भरती किया गया। एक डिलीवरी केस सीरियस हालत में पहलगांव की मुस्लिम कश्मीरी महिला का आया। उस महिला के लिये हड़ताल से बंद पहलगांव के अंदर से अर्द्धरात्री बाद मेडिकल स्टोर खुलवाकर दवाईयां मंगवाई गई। महिला का पति पूछने लगा,

''लड़का हुआ है न साहब?''

ड्यूटी नर्स ने उसे लताड़ पिलाते हुये कहा, ''लड़के की चिंता कर रहा है, यह नहीं पूछ रहा कि औरत की जान बची या नहीं। गनीमत है यहां आ गया और इसकी जान बच गई।''

यहां इंसानियत सच्चे रूप में सामने थी। पूरा हिन्दु स्टाफ, सुरक्षा बल, यात्री तक बीमार की मदद को तैयार थे। दोनों महिला मरीजों को पांच छः आदमी स्ट्रेचर पर डाल कर, उठाकर लाये थे। उनके लिये रास्ता बनाने में सौ फुट की लम्बाई में दोनों ओर सो रहे यात्रियों को टांगे समेटकर या उठ कर रास्ता देना पड़ा। नींद में खलल तो उस भवन में सो रहे सारे यात्रियों को पड़ा ही।

चंदनबाड़ी की ओर

19 अगस्त 1994 शुक्रवार– सभी प्रातः पांच बजे उठ गये। नित्य कर्मो से निवृत होने के लिये लिद्धर नदी के किनारे भारी भीड़ पड़ी थी। पांच–पांच फुट की दूरी पर महिला–पुरूष गर्दन नीचे किये हुये बैठे थे। शर्म नामक चिड़िया दूर–दूर तक नजर नहीं आती थी। हाथ मुंह धो सभी सामान पैक करने में जुट गये। अब पैदल का रास्ता था। सामान कम से कम ले जाना था। अधिकांश सामान यहां लॉकरूम में रखकर जाना था। पहले हमारा इरादा ओढ़ने के शाल आदि लेकर जाने का नहीं था परन्तु कई व्यक्तियों द्वारा ऊपर सामानों की कमी का जिक्र करने पर हमने सारे गरम कपड़े, गरम शॉल, दरियां, प्लास्टिक शीटें तथा नाश्ता तक रखा। दैनिक पहनने के कपड़े, लोटा, पानी की बोतलें दवाइयों की थैली साथ ली। इस तरह सभी साथियों के बैग पूरी तरह भर गये। हलवे का टिप्पन बहुत भारी था। कोई साथी उसे रखने को तैयार नहीं हुआ अतः टिप्पन वहीं छोड़ना पड़ा। हम छः साथियों के पास पृथक–पृथक अपने–अपने रैनकोट भी थे। इस तरह सभी के बेग में 10–12 किलो वजन हो गया। पांच सूटकेस तथा एक बड़ा बैग पहलगांव लॉकर में रखने के लिये ताले आदि लगाकर तैयार कर दिये। हमारे साथियों ने घूम–फिर ऊपर जाने की व्यवस्थाओं की जानकारी ले ली थी। हम साढ़े छः बजे सब काम से निवृत्त हो यहां से चंदनबाड़ी जाने को तैयार हो गये।

हमारे फाइवस्टार के बंगले में एक हरियाणवी वृद्ध अपनी पत्नी के साथ रात देर से आकर सोये थे। प्रातः उठने पर वे जोर–जोर से बोल रहे थे। मुझे उनके ऊपर से आने का पता लगा तो मैं उनसे जानकारी प्राप्त करने के लिये उनकी ओर मुखातिब हुआ।

''चंदनबाड़ी से शेषनाग कितना पड़ता है?''

''पड़ता तो ग्यारह किलोमीटर है। पर तू जायेगा जब याद पड़ेगा कितना है?''

''बस ग्यारह किलोमीटर ही।''

''तुझे बस लागे है, रात को ग्यारह बजे पहुंचे हैं राम–राम करके।''

''कितने बजे चले थे?''

''दिन के ग्यारह बजे।''

''बारह घंटे लगे?''

''नहीं तो क्या तुझसे झूठ बोलूंगा? तुझ से झूठ बोलने से मुझे कुछ फायदा थोड़े ही हो रहा है।''

''अरे नहीं बाबा, मैं तो जानकारी ले रहा हूं। वहां सोने का इंतजाम तो मिल गया होगा।''

''हां हां, बहुत बढ़िया इंतजाम है, डबलबेड के पलंग बिछे हैं, जिन पर डनलप के गद्दे लगे हैं।''

''हूं''।

''अरे छोकरे कै इंतजाम है? खुले आकाश के नीचे यो कोट पहन के बरसते पानी में यूं का यूं बैठे रात गुजारी है।''

''पर बाबा वहां तो सरकार ने टेंट लगाये हैं। कंबलों का इंतजाम किया है न?''

''सौ–दो सौ टेंट लगाये ढिंढोरो पीट दियो। तम्बू में पांव रखने की जगह ना मिली। कंबल–संबल रहने दे एक फट्यो टाट को टुकड़ो भी मेरे काने ना मिल्यों। बस जैसे–तैसे जान बची, यही गनीमत है। थें ऊपर जा रहा हो तो घरां ने तार कर दियो, 'मैं आ जावां तो ठीक, नि तो मैं को इंतजार कोनि कर ज्यो'।''

बुजुर्ग हरियाणवी बातूनी थे। हमारा एस.पी. मारवाड़ी–हरियाणवी जानता था। मेरे से तो बाबा नाराज सा होकर बोल रहा था। बाद में कमान एस.पी. ने संभाली और थोड़ी देर दोनों ने मारवाड़ी में बातें की। आज उतरे यात्री के मुंह से ऐसी दास्तान सुन हमारे होश उड़ने लगे। विचार बना एक खच्चर करके उस पर एक टेन्ट और दस बारह कंबल लादकर ले चले। खच्चर तो मिल जाता पर कंबल–तम्बू कहां रखे थे। भोले पर भरोसा कर, 'होगा सो देखेंगे' सोच बाबा से विदा ली। सबने मिलकर सामान उठाया और तम्बूओं वाले मैदान में आ गये। एक बहुत लम्बी लाइन लगी था। यह ऊपर जाने के लिये परिचय पत्र बनवाने वालों की लाइन थी। मैं स्वेच्छा से इस लाइन में खड़ा हो गया। बाकी साथी सामान उठा उन्हें जमा कराने की व्यवस्था देखने चल पड़े। थोड़ी देर बाद संजय मुझे लाइन से निकाल ले गया। बोला,

''हरिमोहन भाई साहब बहुत आगे घुस गये हैं।''

एक जगह हमारे सामानों का ढेर लगा था, मैं वहां रखवाली पर बैठ गया। पहले परिचय पत्र बनेगा तब सामान जमा होगा। इसके बाद बाहर जो भी बस मिले उसमें बैठ कर जाना है। पारीक सा. प्रातः के नाश्ते की तैयारी में लंगर की तरफ चले गये। उन्हें चाय पीने की तलब भी रहती है। ऊपर रास्ते में कोई खाने–पीने की चीज मिलने की उम्मीद भी नहीं थी। काफी देर तक परिचय पत्र काउंटर चालू नहीं हुआ। काउंटर चालू होने से पूर्व एक लाइन दूसरे काउंटर पर और बना दी गई, जहां एस.पी. घुस गया। दोनों में से जिसका नम्बर पहले आयेगा, वह परिचय पत्र बनवा लेगा।

मैं सामान के पास कुछ देर खड़ा रहा। तत्पश्चात थकान आने पर शीट निकाल, बिछाकर बैठ गया। शरीर में कुछ कमजोरी महसूस होने लगी और मैंने दैनिक जीवन का एक सिद्धांत और तोड़ा। इलेक्ट्रॉल की थैली पानी की बोतल तथा गिलास मेरे पास ही था। पहले इलेक्ट्रॉल लिया, मन कुछ ठीक हुआ तो धीरे–धीरे नाश्ता चबाने लगा। इस तरह बिना शौच गये मैंने नाश्ता कर

लिया। मेरे बिल्कुल पास ही एक मद्रास की पार्टी का सामान रखा था। दक्षिण भारतीय शक्ल देख एवं भाषा सुन मुझे सुखद आश्चर्य हुआ। हमारे से तो कई गुना ज्यादा दूर से आये हैं ये लोग। मैंने ही बातचीत शुरू की। पहले हिन्दी में फिर मजबूरन अंग्रेजी में। वे हिन्दी बिल्कुल नहीं जानते थे तथा अंग्रेजी टूटी–फूटी जानते थे। खास मद्रास के रहने वाले, एक परिवार के आठ पुरूष सदस्यों की पार्टी थी। आपस में नाम बताये गये। उस प्रौढ़ सज्जन ने उनके बेटे तथा छोटे भाई से भी मेरा परिचय करवाया। वे बिस्किट निकाल खाने लगे और एक–एक पीस नाश्ते का आदान प्रदान भी हुआ। उनकी सबकी इच्छा सिर्फ पैदल ही यात्रा करने की थी और हमारी भी। आगे मिलेंगे ऐसी आशा व्यक्त कर वे लोग हमारे पहले वहां से उठकर चले गये।

नाश्ता करने के बाद मुझे कुछ प्रेशर महसूस हुआ। हमारे अन्य साथी के आने पर उसे बिठा मैं लिद्दर के किनारे चला गया। सारी जमीन पर इस तरह गंदगी बिछी थी कि कदम रखने के लिये बमुश्किल साफ जगह मिल पाती थी। सडांध के मारे सिर फिरने सा लगा। ज्यादा दूर नहीं गया। एक छोटे नाले के पास ही कार्यक्रम निपटाया। हाथ धोने के लिये नाले के पास बैठा तो एक शौच करता जवान यात्री बोला,

''बाबूजी आप यह पानी मत पीना। सूअर की औलाद यात्री इस पानी में ही लैट्रीन करके जा रहे हैं।''

वह लड़का भी एक यात्री ही था, जो उस नाले के बिल्कुल किनारे बैठा था। सूअर की औलाद और इंसान की औलाद में इतना ही फर्क होता है क्या? मैने वहां मिट्टी से हाथ धोये फिर नल पर जाकर हाथ, मुंह धोये और कुल्ले किये। वापस सामानों के पास आया तो सब लोग जाने को तैयार खड़े थे। पारीक सा. लंगर में ही क्लॉकरूम देखकर आये थे। यहां मिलेट्री के क्लॉक रूम में तो बहुत लम्बी कतार लगी थी। पारीक सा. ने दोनों बच्चों को साथ लिया और सारे सामान पांच सूटकेस व एक बेग लेकर हमें यहीं इंतजार करने का आदेश दे चले गये। लंगर क्लॉक रूम आधा किलोमीटर दूर था और सामान भारी। कोई पौन घंटे बाद लौटे। लौटते वक्त वे छड़ियां देखते हुये आये थे। बोले,

''पहले छड़िया ले लो, इधर आगे बताई।''

हमने कुछ आगे जाकर पांच–पांच रूपये में छड़ियां खरीद ली। अब हमें चंदनबाड़ी जाने के लिये बस का इंतजार था।

पहलगांव से चंदनबाड़ी मिनी बसें तथा टैक्सियां लगी हुई थी। मिनी बस की दर चालीस रुपये तथा टैक्सी की पिच्चांसी रूपये प्रति सवारी थी। गत वर्ष क्रमशः दस एवं पच्चीस रूपये प्रति सवारी थी। प्रतिबंधित यात्रा के कारण पहलगांव की व कश्मीर की गाड़ियां नहीं आई। जम्मू क्षेत्र से थोड़ी सी गाड़ियां आई हैं। काफी इंतजार के बाद एक मिनी बस आई तो उस पर यात्री छत्ते पर मधु मक्खियों की तरह टूट पड़े। हमारा हरिमोहन भी अंदर घुस गया पर मेरी हिम्मत नहीं हुई। हमने उसे बाहर बुला लिया। अगली गाड़ी देखेंगे। हमें भविष्य का पता नहीं होता। अगली गाड़ी न आती देख पारीक सा. ने एक सुरक्षाकर्मी से सलाह की।

''उधर से खाली गाड़ियां आती हैं जो रास्ते में से ही भरकर वापस चली जाती है। आप एक दो किलोमीटर आगे चले जाओ, वहां गाड़ी मिल जावेगी।''

'बोल बम' का नारा लगा हम पैदल चंदनबाड़ी के रास्ते की ओर बढ़ चले। हजारों यात्रियों का हुजूम बढ़ रहा था। घोड़ेवाले भी काफी तादाद में अपने घोड़े लेकर जा रहे थे। घोड़े वालों से चर्चा की। उन्होंने दो सौ रूपये प्रति सवारी मांगी। चालीस रूपये के स्थान पर दो सौ रूपये देना हमें मंजूर नहीं हुआ। समय भी ज्यादा लगना था। अतः पैदल ही बढ़ते रहे। पहलगांव की सीमा समाप्ति पर लिद्धर नदी पर एक पुल आता है। अभी तक नदी हमारे बायीं ओर थी, पुल पार करने के बाद दायीं ओर हो गई। पुल के पास ही बड़ी भट्टी पर कढ़ाह चढ़ा था। जिस पर गरमागरम नमकीन परांठे बनाये जा रहे थे। प्रत्येक यात्री को प्रेम भाव से भोलेनाथ का प्रसाद मय अचार, चटनी व आलू की भाजी के साथ दिया जा रहा था। हम सबने भी एक–एक परांठा लिया। मैं तो पूरा नहीं खा सका। आधा फेंककर नदी में पानी पी कर चल दिये। अब चढ़ाई भी शुरू हो चुकी

थी। यह यात्रा भी पैदल करने का मानस बना, पूरे मनोरंजन से आगे बढ़ने लगे। थोड़ी देर में हमारी जवान यूनिट रामू, संजय बहुत आगे निकल गये। हरिमोहन, पारीक सा. बीच में हो गये। सत्यप्रकाश व मैं अंत में। हम पसीने से भीगे प्यास के मारे रामू, संजय को कोसते रहे जो पानी की बोतलें एवं चूसने की गोलियां लिये आगे चले गये थे। एक स्थान पर मिलेट्री का जवान प्याऊ पर यात्रियों को पानी पिला रहा था। पानी पीने के बाद उससे पूछा तो उसने बताया कि आप पांच किलोमीटर आ गये हो। थोड़ी देर सुस्ताकर आगे बढ़े। हरिमोहन, पारीक सा. एवं उनके सहयात्रियों ने एक मिनी बस रोक ली। उधर से दो बसें दस–पांच, दस–पांच सवारियां लेकर लौट रही थी। एक बस वाले ने अपनी सवारियां दूसरी बस को दी एवं बस मोड़ दी। कुछ ही क्षणों में बस ऊपर नीचे पूरी भर गई। बैग एवं छड़ियां ऊपर छत पर फेंक कर हम बस के अंदर खड़े हो गये। पारीक सा. छत पर जा बैठे थे। बस चलने के बाद हमने रामू व संजय का ध्यान रखा। बस रोक कर उन दोनों को पीछे लटकाया। छोटी बस थी। रास्ता सीधे चढ़ाई का एवं उबड़–खाबड़ था तथा दाईं ओर आधा किलोमीटर गहरी खाई थी। एक चढ़ाई वाले मोड़ पर बस वापस लौट पड़ी। सभी यात्रियों के सिहरन दौड़ गई। ड्राइवर चिल्लाया, ''पत्थर लगाओ।'' पीछे लटके यात्रियों ने उतर कर पहियों पर पत्थर लगाये। ड्राईवर ने ब्रेक लगाया। सभी के जान में जान आई। गाड़ी से यात्री उतारे गये। चढ़ाई बाद यात्री पुनः बैठे। पूरे रास्ते तीन बार यह प्रक्रिया दोहराई गई। मिलेट्री वाले ड्राइवर पर झल्लाते,

''ऊपर सवारी क्यों बिठाई?''

ड्राइवर कह देता, ''साहब उतरते ही नहीं मैं क्या करूं?''

एक बार तो लटकती हुई सभी सवारियां बस में ऊपर एवं अंदर ठूंसी भी गई पर घुटन से परेशान हो हमारे रामू, संजय जैसे लोगों ने लटकना ही ज्यादा पसंद किया। सामने से आने वाली टैक्सी या मिनी बस को साइड देने में भी इस रोड़ पर बहुत तकलीफें थी। साइड देने के लिये कई बार बस को रुकना पड़ा या आगे पीछे करके निकालना पड़ा। बस कंडक्टर ने रास्ते में ही सवारियों से चालीस–चालीस रुपये वसूल कर लिये।

''अरे भाई पांच किमी के तो कम ले।''

''नहीं, मैंने पहले बोल दिया था।''

''और हमने पत्थर लगाये और धक्के लगाये उसका क्या होगा?''

पूरी यात्रा में धक्के लगाने वाले यात्री यह चुटुकला सुनाते आये। पैसे तो पूरे देने ही पड़े। चंदनबाड़ी से पूर्व ही बस खाली करवा ली गई। हमारी एक छड़ी भी इस यात्रा में खो गई, जो थोड़ा आगे जाकर दस रूपये में लेनी पड़ी। इस तरह पहलगांव से चंदनबाड़ी सोलह किलोमीटर यात्रा तीन घंटे में कष्टपूर्वक सम्पन्न हुई। साढ़े दस किलोमीटर का चालीस रूपये किराया, वह भी खड़े होकर व लटककर सफर करने का, बहुत अखरा। साढ़े पांच किलोमीटर व्यर्थ ही पैदल चलना, शायद सब किस्मत की ही बात थी वरना पहली बस में हरिमोहन के पीछे–पीछे घुस जाते तो यह नौबत तो नहीं आती।

मिनी बस वालों की अंधी कमाई पर हमें रश्क होने लगा था। ज्यादा से ज्यादा एक घंटा का सफर और दो हजार रूपये की वसूली। पंद्रह दिनों में इन लोगों की गाड़ियों की कीमत निश्चित ही वसूल हो जायेगी। हिम्मत की ही तो कीमत है यह वरना उग्रवादियों की जान से मारने की धमकी के आगे और लोग भी आते न सामने। इसी तरह यहां करीब आठ सौ घोड़े खच्चर वैष्णव देवी से लाये गये। तीन हजार पिट्टू (बोझा ढोने वाले) जम्मू क्षेत्र से लाये गये। यात्रा की प्रारम्भिक तैयारियां बाहर से लाये गये मजदूर, खच्चर एवं वाहनों द्वारा ही की गई। हरकत उल अंसार की धमकियों के कारण, जे.के.एल.एफ. (जम्मू कश्मीर लिबरेशन फ्रंट) द्वारा हरी झंडी दिखाने के बावजूद, यहां के निवासियों ने सहयोग नहीं दिया। यात्रा प्रारम्भ होने के बाद यहां पहलगांव के मजदूर व घोड़े वाले कुछ काम पर लगे। मिलेट्री की सुरक्षा व्यवस्था, सालभर खर्चे लायक कमाई का लालच, क्रमशः पिठ्टूओं एवं खच्चरों की संख्या में वृद्धि होती गई।

कठिन चढ़ाई–पिस्सू टॉप

चंदनबाडी बस से साढ़े ग्यारह बजे उतरे। एक लंगर पर चकाचक खीर के दोने ग्रहण किये। दूसरे लंगर पर चाय पकौड़ी थी। आगे जलधारा पार करने पर कई यात्री स्नान कर रहे थे। यहां से मिलेट्री द्वारा लगाये तम्बू बहुत सुंदर लग रहे थे। पूरा नगर तम्बूओं का बना था। जिसके बीच में यह साफ–सुथरी सड़क थी। हममें से किसी ने भी आज स्नान नहीं किया था। सभी ने विचार विमर्श कर आगे रास्ते में स्नान करना तय किया। थोड़ा आगे बढ़ने पर भोजन के कई लंगर नजर आये। यहां पुनः ऊपर जाने वाले यात्रियों का रजिस्ट्रेशन व चेकिंग हो रही थी। हमारे पास पहलगांव में बना परिचय पत्र था। अतः हमें मेटलडिक्टेटर से निकल कर जाने दिया गया। एक बी. एस.एफ. के लंगर पर शांति से बैठकर हमने पूरी और आलू की सब्जी खाई। मेरा मन कुछ खराब सा था अतः मै बहुत कम खा पाया। हमारे चार साथियों ने यहां चाय भी पी। अब तक सवा बारह बज चुके थे और हम आगे की यात्रा के लिये पूर्ण रूप से तैयार हो गये थे। स्वास्थ्य के दृष्टिगत मेरा मन कुछ घबरा रहा था। पहले मैंने साथियों को एक पिठ्टू करने का व बाद में एक घोड़ा करने का सुझाव दिया। मेरे सुझावों को कायरता बताकर हवा में उड़ाया जाता रहा। एस.पी. अवश्य मेरे सुझावों से सहमत था पर बाकी लोग अति उत्साहित थे।

''अरे ग्यारह किलोमीटर सारा ही है। अभी ढाई–तीन घंटों में पहुंचते है। इतना–इतना सा बोझ है। आपसे बैग नहीं उठ रहा हो तो मुझे दे देना। मैं पचास साल का नहीं घबरा रहा। तू बड़ा घबरा रहा है। हिम्मत रख''।

इस तरह की व्यंग्योक्तियों को सुन मैं अपनी बात पर जोर नहीं दे पाया। जैसी इच्छा भोलेनाथ की। वही पार लगायेगा। हम चल पड़े। यहां से अमरनाथ घोड़े की दरें 1080 एवं पिठ्टू की 800 रूपये बोर्ड पर लिखी हुई थी। मैं समझ रहा था यह दरें आने–जाने की है। पारीक सा. बाद में बता रहे थे कि ये सिर्फ जाने की ही हैं। यहां घोड़ों, पिठ्टूओं का रजिस्ट्रेशन हो जाता है। अतः यहां से घोड़े पिठ्टू करने में सुरक्षा भी रहती है। हमें बारां में ही यह सुझाव दिया गया था कि हम चंदनबाड़ी से एक पिठ्टू अवश्य कर लें। चलने की क्षमता कम हो तो घोड़ा भी यहीं से ले लें परन्तु हम उस सुझाव पर अमल नहीं कर पाये।

तेज धूप में आधा किलोमीटर जलधारा के साथ चलने में ही मेरे पांव टूटने लगे एवं मुंह सूखने लगा। पिस्सू घाटी के पूर्व जलधारा गति के साथ कोई बीस फुट ऊपर से गिरती है। यहां बड़े–बड़े वृक्षों की छाया, विशाल चट्टानें तथा नदी में उतरकर नहाने का रास्ता है। कई यात्री यहां स्नान का आनंद ले रहे थे परन्तु हमारे साथी आगे बढ़ गये थे। मैं दस मिनट सुस्ताया। पीछे से एस.पी. व हरिमोहन भी आ गये तब हमने दो फोटो लिये। बोतल निकालकर पानी पीया और आगे बढ़ चले। सामने पिस्सू घाटी थी। पता नहीं यहां इस नाम का क्या अर्थ है? हम जहां खड़े थे उससे बिल्कुल ऊपर 85^0 के कोण पर कोई एक किलोमीटर ऊंचा चढ़ना था। मानो एक चींटी जैसे जीव को जमीन से हाथी की पीठ पर चढ़ना हो। इस घांटी पर मुख्य रास्ते के अतिरिक्त अनेक छोटे रास्ते बने हुये हैं। जिन्हें शॉर्टकट कहते हैं। सभी नौजवान व फुर्तीले व्यक्ति शॉर्टकट का प्रयोग करते है। ऊंचाई बराबर चढ़नी पड़ती है परन्तु रास्ते की लम्बाई कम हो जाती है। इससे समय कम लगता है परन्तु थकान ज्यादा आती है। हमारे दोनों नौजवान साथी शार्टकट से धड़ाधड़ ऊपर चढ़ते गये। हम चारों साथी कुछ आगे–पीछे विश्राम करते, बैठते, धीरे–धीरे चढ़ते रहे। पूरी घाटी में सिर्फ एक जगह पीने का पानी मिला। वहां पहाड़ से छोटा सा रिसाव था, जो यात्रियों के आने–जाने से गंदा हो जाता था। मेरी बोतल का पानी कब का समाप्त हो चुका था। अतः यही पानी पीना एवं बोतल में भरना पड़ा। पानी की बोतल पूरे रास्ते मेरे अतिरिक्त अन्य यात्रियों के भी काम में आई। अंत में बोतल में नीचे जमी काफी सारी मिट्टी फेंकी गई।

पूरी घाटी में पिठ्टूओं और घोड़ों की भरमार थी। पिठ्टू हमारा बैग ऊपर ले जाने का बीस रूपये प्रति बैग मांग रहा था। घोड़े वाले आधी घाटी चढ़ने के बाद दो सौ रूपये सवारी में पिस्सू घाटी पार करा रहे थे। कई यात्रियों ने उनकी सेवाओं का उपयोग किया। घोड़ेवालों का

घाटी से नीचे उतरना आश्चर्यजनक था। वे अस्सी अंश के उतार से बिना रास्ते घोड़े लेकर सीधे भाग रहे थे। इसी भागमभाग में शायद वह घोड़ा मरा होगा जिसकी लाश घाटी के बीचों बीच पड़ी थी। यहां घोड़ेवाले अच्छा पैसा कमा रहे थे। प्रति आधा घंटा दो सौ रूपये। पिठ्टू भी एक बार में सौ रूपये का बोझा ले जाता था परन्तु उसे यात्री के साथ धीरे–धीरे चलना पड़ता था। अतः वह कम चक्कर कर पा रहे थे। पिस्सू घाटी के अंतिम मोड़ से नीचे का दृश्य बड़ा खूबसूरत दिखाई देता है। नीचे के व्यक्ति बच्चों जैसे नजर आते है तथा आधी घाटी चढ़े व्यक्ति भी शक्ल से नही पहचाने जा सकते। यात्रियों के लिये यह घाटी एक चुनौती है। कई यात्री ऐसी खतरनाक जगहों पर चले गये जहां से उन्हें हाथ टेक–टेक कर एवं बैठ–बैठ कर जैसे–तैसे आना पड़ा। रामू, संजय को एक खतरनाक शॉर्टकट चढ़ते देख कर मैं घबरा गया। ऊपर आकर उन्हें इस दुःसाहस के लिये डांट भी बताई ।

पिस्सू टॉप 11600 फीट की ऊंचाई पर है। रामू व संजय काफी पहले पहुंचकर वहां हमारा इंतजार कर रहे थे। हम चारों भी क्रमशः पहुंचे। यहां आकर यात्री पिकनिक व जश्न मना रहे थे। हम भी हरी घास पर बैठ गये। बैग खोलकर थोड़ा–थोड़ा नाश्ता किया। आसपास के सुन्दर परिदृश्यों से नेत्र तृप्त किये एवं फोटो लिये। चंदन बाड़ी से यहां पहुंचने में दो घंटे लग गये थे। रामू व संजय सवा घंटे में आ गये थे। दोपहर ढ़ाई बजे से तीन बजे तक हमने यहीं आराम किया। चलने से पहले रामू–संजय को हिदायत दी कि अच्छी सी जगह देखकर रुकना। वहां हम सब मिलकर नहायेंगे। पूर्व में सुनी उक्तियों के अनुसार कि यदि पिस्सू टॉप चढ़ गये तो अमरनाथ यात्रा हो गई समझो, हमारे चेहरों पर संतोष व सफलता के भाव थे।

जॉजबल एवं शेषनाग

पिस्सू घाटी के आगे उतार था परन्तु यह उतार हमारी कल्पना जैसा नहीं निकला। रास्ता बार–बार ऊपर–नीचे होता रहा। पिस्सू घाटी से ही टांगे बीस–पच्चीस फुट की चढ़ाई पर टूटने लगती। हमारे दायीं ओर सैकड़ों फुट नीचे नदी बह रही थी। बायीं ओर हजारों फुट ऊंचा पहाड़ था। रास्ता दो से पांच फीट तक का बना था जो कई जगह गत दिनों हुई वर्षा से टूटकर सिर्फ पंजा रखने लायक ही रह गया था। अभी हमें पहलगांव से यहां तक कहीं भी वर्षा नहीं मिली थी अतः फिसलन का खतरा हमारे सामने बिल्कुल नहीं था। सामने गहरी घाटी में देखते हुये या चढ़ाई पर पीछे मुड़कर देखने पर झांई छूटती थी। अतः हर यात्री एक दूसरे को सिर्फ रास्ता देखने की सलाह देता था। मैं गहरी खाइयों, ऊंचे पहाड़ों एवं मुड़मुड़ कर पीछे छूटे सौन्दर्य को देखते हुये ही आगे बढ़ता था। जो अन्य यात्रियों द्वारा टोके जाने का कारण बन जाता था। पिस्सू घाटी के बाद की यात्रा में आगे ही आगे रामू व संजय, बीच में हरिमोहन, पीछे एस.पी. व पारीक सा. के साथ मैं था।

रास्ते में एक तेज गति से बहता झरना आया। हमने यहां स्नान करने का निश्चय किया। हमारे तीन साथी आगे जा चुके थे तथा एस.पी. ने भी धीरे–धीरे चलने की इच्छा प्रकट करते हुये आगे बढ़ना शुरू कर दिया। पारीक सा. व मैं यहां रुक गये। बदबू और गंदगी के मारे यहां भी बुरा हाल था। दाढ़ियां बनाई गई और लक्स के लिक्विड साबुन से, झरने के पानी से लोटे की मदद से नहाये। पारीक सा. व मेरे पास पृथक–पृथक लोटे थे, जिनका नहाने एवं पानी पीने में यहां रुके कई यात्रियों ने भी उपयोग किया। तेल, कांच, कंघे का भी उपयोग किया गया। मैंने अपनी टांगों की सरसों का तेल लगाकर खूब मालिश की।

हम दोनों कोई घंटा भर रुककर नहा–धो तरोताजा हो आगे बढ़े पर मेरे पैर तो जवाब दे चुके थे। यहां अभी हम आधे से ज्यादा आ गये थे। उधर से लौटने वाले यात्री बता रहे थे कि

शेषनाग अब पास ही है। बढ़ना तो था ही। पारीक सा. हिम्मत बंधाते रहे, मैं आगे बढ़ता रहा। आज की यात्रा के अनुभव में मैंने चलना सीख लिया था। अब हम बैठते कम थे। थकान आने पर एक दो मिनट स्थिर खड़े रहकर पैरों को आराम दे लेते थे। हम शेषनाग झील से आने वाली शेषनाग नदी के सहारे आगे बढ़ रहे थे। कुछ दूर चलने पर रास्ता उतर गया और नदी के बराबर आ गया। यहां थोड़ा मैदान सा है। यह स्थान जॉजबल कहलाता है। यहां दो–तीन लंगर है तथा पक्के निर्माण के चार–पांच कमरे बने हुये हैं। यहां पर गतवर्ष के मानव निर्मित चबूतरे नजर आ रहे थे। जिससे जाहिर होता है कि गतवर्ष यहां बाजार लगा था। मैं इन्हीं में से एक चबूतरे पर धम्म से जाकर बैठ गया। लाठी फेंकी, बेग उतारा, प्लास्टिक शीट निकाली तथा लेट गया। थोड़ी देर में पारीक साहब लंगर से एक बीकानेरी नमकीन की 100 ग्राम वाली थैली और लोटे में चाय ले आये। पारीक सा. के आग्रह पर मैंने चाय की चुस्कियों के साथ नमकीन निगले और इस तरह जीवन का एक नियम और तोड़ा। शेषनाग नदी से पानी की बोतल भर हम आगे बढ़े। दो एक खच्चर वाले एक शार्टकट रास्ते से जा रहे थे और अधिकांश यात्री मुख्य रास्ते से। पारीक सा. से जिदकर मैं उन्हें शार्टकट रास्ते से कोई साठ–सत्तर फुट ऊपर पहाड़ी पर चढ़ा ले गया। वहां जाने के बाद महसूस हुआ, हम गलत आ गये। ऊपर से लौटते खच्चर वालों ने बताया कि यह रास्ता सिर्फ खच्चर वालों के लिये है। यह बहुत लम्बा और खराब रास्ता है। अब हमें वापस आकर यात्रा के मुख्य रास्ते में मिलना था। हमारा इतना ऊपर चढ़ना एवं चलना व्यर्थ हो गया था। गरीबी में आटा गीला। पारीक सा. के मन में नाराजगी तो बहुत थी परन्तु मेरी शारीरिक व मानसिक दशा देख उन्होंने डांट नहीं बताई। सही रास्ते पर आने के लिये हमें उबड़–खाबड़ पहाड़ी से बिना पगडंडी के सीधा उतरना पड़ा। चलो एडवेंचर का आनंद ही मिला।

आगे रास्ता बहुत संकरा, खतरनाक तथा उबड़–खाबड़ था। उतार जोजबल पर समाप्त हो गया था और यहां से शेषनाग तक हमें ऊपर चढ़ना था। पिस्सू घाटी की तरह नहीं बल्कि पहाड़ के सहारे उतरते–चढ़ते। कोई चार किलोमीटर का रास्ता है। हमारे चारों साथी आगे जा चुके थे। पारीक सा. मेरा संबल बने थे। मेरे मुंह से पगपग पर भगवान का नाम निकल रहा था। हे भगवान! मुझे शक्ति दे। मेरे पैरों में ताकत दे मैं तेरे दर्शन करने आ सकूं। ये आवाजें मेरी अंतरात्मा से आ रही थी। एक–दो बार पारीक सा. ने भी मेरी प्रार्थना सुन ली और आगे जाकर साथियों में उजागर कर दिया। सारे रास्ते उतरने वाले यात्रियों से पूछते रहे 'अब कितना दूर है' और यात्री कहते 'बस इस पहाड़ी के पार ही है'। 'बस एक किलोमीटर और है'। किसी तरह शेषनाग पहुंचे ही। शाम के साढ़े सात बजे। बीच रास्ते में बीस–पच्चीस कदम एक बर्फ के ग्लेशियर पर भी चलना पड़ा। शेषनाग 12800 फीट ऊंचाई पर स्थित है। यहां एक प्राकृतिक झील बनती है। इस झील से निकली नदी के सहारे–सहारे ही हम यहां तक आये है। चारों ओर ऊंची पहाड़ियों पर बर्फ जमी हुई है। धुंधलके में झील, पहाड़, पूरा वातावरण बड़ा रमणीक लग रहा था।

शेषनाग में भी काफी सारे लंगर लगे थे। आगे ही आगे के लंगर वालों ने बड़े प्यार से बुलाया। 'भोलानाथ का प्रसाद ग्रहण करो साहब'। मुझे तो चक्कर से आ रहे थे। कुछ खाने की इच्छा नहीं थी। साथी लोग थोड़ा आगे जाते ही मिल गये। संजय, रामू साढ़े पांच बजे पहुंच गये थे। लाइन में लग परिचय पत्र दिखाया तब छः व्यक्तियों के बीच एक कंबल मिला था। हरिमोहन थोड़ी देर बाद पहुंचा। उसने कुछ झूंठ बोल–बाल, बस का टिकट दिखा एक कंबल और कबाड़ लिया। तम्बू कहीं खाली नहीं था। मिलेट्री वालों से लगातार आश्वासन मिल रहा था,

'तम्बूओं की व्यवस्था हो रही है। सब को तम्बूओं में सुलायेंगे।'

लेकिन व्यवस्था कहीं होती नजर नहीं आ रही थी। खाने एवं पीने के पानी, चाय आदि की कोई कमी नहीं थी। एक लंगर से जाकर मैं दो पुड़ी व भाजी ले आया। दो व्यक्ति मिलकर भी उसे नहीं खा सके। फेंकफांक कर पानी पीया और प्लास्टिकशीट, दरी बिछाकर हताश बैठ गये। पर पारीक सा. चुप बैठने वाले नहीं थे। वे रामू को लेकर तम्बूओं की तलाश में आगे बढ़े। आगे दूसरी पहाड़ी पर कोई आधा कि.मी. दूर अलग नगरी बसी थी। रात्रि के दस बजे रामू आया।

''चलो उधर थोड़ी जगह मिली है।''

''कितनी दूर?''

''यहां से एक किलोमीटर दूर, वहां?''

हम सब अपने सामान समेट रामू के पीछे चल दिये। एक पहाड़ी से दूसरी पहाड़ी पर जाना था। घूम–फिरकर रास्ता कोई दो सौ फीट नीचे उतरकर वापस डेढ़ सौ फीट ऊपर चढ़ता है। उस थकान में तो वह एक किलोमीटर से भी ज्यादा लगा।

प्रधानजी की सेवायें

एक शामियाना तना था। आसपास खुली जगह थी। नीचे फर्श बिछा था। यहीं छः व्यक्तियों लायक जगह रोकी। ऊपर की ओस से तो बचाव होगा ही। यहां पास ही काफी सारे तम्बू लगाये गये थे तथा लंगर की व्यवस्था भी की गई थी। यह प्रधान जी की व्यवस्था थी। एक अकेले व्यक्ति की व्यवस्था। बिना किसी सरकारी सहायता के। प्रधान जी को बहुत–बहुत धन्यवाद। शेषनाग की शीत में, बिना तम्बू के, बिना नीचे फर्श बिछाये, सिर्फ दो कंबल व पांच शॉल के सहारे बाहर सोने की कल्पना करके ही हमारे रोंगटे खड़े हो रहे थे। यदि पानी नहीं आता है तब भी सिर्फ ओस ही कंबल को पूरा भिगो देगी। स्वास्थ्य के हिसाब से मेरी हालत सबसे ज्यादा खराब थी। दस्त व बुखार ने मुझे तोड़ दिया था। गले के नीचे कुछ नहीं उतर रहा था। थकान तो सभी को भारी थी ही परन्तु मैं तो बिलकुल हिम्मतपस्त हो गया।

''भगवान तूने मुझे कहां ला फंसाया? आगे तेरे इस रास्ते कभी मत बुलाना, कान पकड़ता हूं। इस बार तो किसी तरह पार लगा प्रभो।''

सत्यप्रकाश भी कई बार उद्घोषणा कर चुका था, सारे तीरथ बार–बार, अमरनाथ एक बार। पारीक सा. जो पूरे रास्ते अपनी बढ़ाई करते हुये कहते आये थे,

''मैं हेमकुंड की चढ़ाई एक सौ दो की बुखार में चढ़ गया था। मैं केदारनाथ चार घंटे में आसानी से चला गया था। अमरनाथ में इससे ज्यादा क्या होगा।'' वे पारीक साहब भी मान गये कि अमरनाथ की यात्रा के सामने वे यात्रायें कुछ भी नहीं थी।

भला हो प्रधानजी का कुछ तो राहत मिली। खाना चाय आदि भी यहां पास ही उपलब्ध था पर पारीक सा. इस व्यवस्था में संतुष्ट नहीं थे। वे प्रधान सा. से लगातार टेंट देने का अनुरोध करते रहे। प्रधान साहब ने एक टेंट में उन्हें घुसा दिया। पारीक साहब ने हमें सामान सिमटवाकर टेंट में बुला लिया। टेंट में पूर्व में ही काफी यात्री सोये हुये थे। पांच छः फुट जगह खाली थी। उसमें बैठते ही बगल में लेटा व्यक्ति बोला, ''यहां हमारे दो साथी आ रहे है। आप उधर सरको।'' तब तो हम छः यात्री बैठ भी नहीं सकते। संजय थोड़ा गरम स्वभाव का है। प्रधानजी के आते ही उसने शिकायत की,

''इसमें तो हमें घुसने भी नहीं दे रहे।''

प्रधान जी ने बगल के यात्री को डांटा और कहा, ''तुम्हारे दो यात्रियों को हम सुलायेंगे। अभी इन्हें सोने दो।'' हंगामे में पूरे टेंट में सोये यात्री जाग ही गये। इतनी देर में उनके दो साथी भी आ गये। हमने काफी जगह बनाने का प्रयास किया पर चार फुट से ज्यादा जगह नहीं बन पाई। लिहाजा दो व्यक्तियों को बाहर उसी शामियाने के नीचे सुलाने का निर्णय करना पड़ा, जहां से कुछ देर पहले हम सब उठकर आये थे। हमारा सोच रामू, संजय के प्रति था। जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया। प्लास्टिकशीट, दरी व कंबल सभी एक–एक देकर उन्हें भेज दिया। गर्म कपड़े, जूते, मौजे, शॉल उनके पास थे ही। रेनकोट का पूरा सूट भी पहनने के निर्देश दे दिये। इसके बाद हम एडजस्ट हुये। हमने भी पूरे गरम कपड़े पहन रखे थे। एक कंबल, दो लोई तथा दो छोटे शॉल ओढ़ने के हमारे पास बचे थे। पहले तीन व्यक्ति करवट लेकर सो गये। ऊपर से मैं आड़ा होकर लेटा और घुस गया। कोई आदमी न तो हिलडुल सकता था न ही सीधा सो सकता था। हमारे सामानों की भी हमें कोई सुध नहीं थी। बैग तकियों की जगह रखे थे और टॉर्च मैंने

सिर के बीच में रख छोड़ी थी। दुर्भाग्य से साढ़े ग्यारह बजे मुझे पेशाब के लिये उठना पड़ा। कितना दुरुह काम था। धुप्प अंधेरे में उठना, बिना अन्य यात्रियों को कुचले टेंट खोलना और हाड कंपाती ठंड में बाहर निकलना। पारीक सा. ने भी उसी वक्त उठकर निपटना अच्छा समझा। दो बार यात्रियों नींद में खलल नहीं पड़ा। इसके बाद पुनः उसी प्रक्रिया से हम ठुंस गये। तम्बू अंदर से बंदकर लिया। सर्दी का नामोनिशान नहीं था। सभी बेसुध होकर सोये। प्रातः पांच बजे पारीक सा. ने सबको जगाया।

गतवर्ष के यात्रियों को कश्मीरियों द्वारा की गई व्यवस्था से डेढ़ सौ से ढाई सौ रूपये प्रति यात्री की कीमत में टेंट में गद्दे, रजाई व तकिये के साथ सोने की सुविधा दिलवाई गई थी। इस वर्ष प्रतिबंध के कारण वे व्यापारी नहीं आये। रामू यहां चार बजे तथा संजय पांच बजे शाम को पहुंचे थे। उस वक्त उन्हें एक टेंट वाला कश्मीरी मिला था। जिसने पूरा टेंट रजाई गद्दों सहित दो हजार एक सौ रूपये में देने का प्रस्ताव किया था। इतनी कीमत पर संजय हां नहीं भर सका। पारीक सा. और मैं साढ़े सात बजे पहुंचे, तब संजय ने यह बात हमें बताई। मैंने तुरन्त उससे तम्बू लेने के लिये कह दिया। संजय ने बाद में कश्मीरी व्यापारी को बहुत ढूंढा पर शायद वह तब तक अपना माल बेचकर जा चुका था। यहां शेषनाग में आज भी तम्बूओं की बहुत कमी है। काफी यात्री अपनी छड़ियों पर प्लास्टिकशीट बांधकर तम्बू जैसा बनाकर उसके अंदर रात भर बैठे, लेटे या सोये हैं। कई लोगों को निश्चय ही खुले में सोना पड़ा होगा। प्रशासन भय के वातावरण में इतने हिन्दू वीरों के यात्रा पर आने की कल्पना नहीं कर सका था। सभी जगह व्यवस्थायें अत्यल्प थी। हमारे साथ देव भी था। इसलिये हमें कहीं बरसात नहीं मिली। गत दिनों हो रही बारिश से इन्हीं कमियों के चलते कई यात्री बिना अमरनाथ गये, शेषनाग से ही वापस चंदनबाड़ी–पहलगांव चले गये। ऐसे यात्रियों की संख्या पांच से सात हजार तक थी। हो सकता है हमें पहलगांव में मिले बुजुर्ग हरियाणी भी बिना पवित्रगुफा तक पहुंचे शेषनाग से ही वापस लौटे सज्जन हों। यदि रात में बारिश होती तो हम लोग तम्बूओं के अंदर सोना छोड़ बैठे भी नहीं रह सकते थे। तम्बू जल्दबाजी में लगाये गये थे जिनमें बहकर आने वाले पानी को तम्बू के अंदर आने से रोकने की कोई व्यवस्था नहीं थी।

तारीख 20 अगस्त 1994 शनिवार सावन सुदी तेरस

प्रातः पांच बजे हल्का सा उजाला होने लगा था। अधिकांश यात्री उठ गये थे। तम्बूओं से थोड़ा आगे ही दो जलधारायें बह रही थी। शौचकर्मों से सब वहीं निवृत हो रहे थे। लाज–शर्म तो सब यात्री जम्मू में ही छोड़ आये थे। सफाई शुद्धता का स्तर भी यहां बहुत घट गया था। उसी जलधारा में वहीं की मिट्टी से तीन बार हाथ धोने की रस्म पूरी की। बोतल के पानी से कुल्ला एवं टूथपेस्ट हुआ। चलने से पहले सबसे बड़ी समस्या कंबल वापस जमा कराने की थी। रामू संजय को हमने सबसे बाद में जगाया था। वे रात में रैनकोट पहनकर नहीं सोये थे और प्रातः उठते ही उन्होंने हमारे से 'पैर ठिठुर गये' इस तरह की शिकायत की। उन दोनों को कंबल जमा करवाने की जिम्मेदारी दे दी गई। हम धीरे–धीरे चलेंगे। वे देर से चलकर भी हमारे से आगे निकल जावेंगे, ऐसी पूरी संभावना थी। कंबलों की व्यवस्था के बारे में भी यहां लिख दूं। प्रत्येक कंबल परिचय पत्र दिखाने पर दो सौ रुपये नकद एडवांस जमा करके दिया जाता था। कंबल लेने एवं जमा कराने दोनों कार्यों के लिये एक बहुत लम्बी लाइन लगती थी। जिसमें एक से दो घंटे तक खड़ा रहना पड़ता था। कंबल जमा करवाने का काम प्रातः सात बजे से शुरू होता था, इससे पूर्व नहीं। कंबल एक बार निकलवा कर हम तीन दिन तक साथ भी रख सकते थे, लेकिन बोझा ढोना हमारे बस में नहीं था। बोझा ढोने वाला कंबल की कीमत के बराबर मजदूरी ले लेता। फिर परिचय पत्र पर कंबल जारी करने की एंट्री की जाती थी। इससे एक ही परिचय पत्र से दुबारा कंबल लेना संभव नहीं था। एक परिचय पत्र पर आठ–दस व्यक्तियों तक प्रायः एक ही कंबल दिया गया। यदि किसी परिचय पत्र में दो या एक व्यक्ति दर्ज है तब भी उसे एक कंबल मिल गया। यदि हम छः व्यक्ति एक की अपेक्षा अधिक परिचय पत्र बनवाते तो हर जगह ज्यादा कंबल प्राप्त कर सकते थे। पूर्व में इस तरह की व्यवस्थाओं की जानकारी यात्री को भला कैसे हो?

गणेशटॉप की ओर

हम छः साथी साढ़े छः बजे अपने–अपने सामान पैक कर चलने को तैयार हो गये। तभी प्रधान जी के लंगर का हलुवा बनकर वितरित होने लग गया। वितरण स्थल के पास ही हम बैठे थे। अतः प्रारम्भ में हमने दोने प्राप्त कर लिये। मैंने दो दोने खाये। इसके बाद चाय वितरित हुई। मैंने भी चाय पी। इस तरह हम सभी का नाश्ता हो गया। रामू, संजय दोनों कंबल लेकर पीछे वाली पहाड़ी की ओर (करीब आधा किलोमीटर) गये और हम आगे अपनी यात्रा पर। चार किलोमीटर गणेशटॉप तक चढ़ाई है। हलुवे के प्रभाव से इस यात्रा में एस.पी. के साथ मैं आगे–आगे रहा। जगह–जगह पानी की बोतल खोलकर एक घूंट पानी पी गला तर किया। एस.पी. की लाई हुई आई.सी. की मीठी चॉकलेट इस चढ़ाई पर बड़ी काम आई। एक जगह मैंने हाजमोला की शीशी खोलकर एक गोली मुंह में रखी तो यात्रीगण हाथ बढ़ा–बढ़ाकर गोली मांगने लगे। पांच मिनट में पौन शीशी खाली हो गई तो बंद करके रखी। गणेशटॉप से पूर्व एक नाला रास्ते में दो बार पार करना पड़ता है। दोनों जगहों में दो किलोमीटर का अंतर है और यहां पानी उपलब्ध नहीं है। मेरी बोतल से कई लोगों ने एक–एक घूंट पानी पीया। जब बोतल में चार–पांच घूंट पानी बचा था तो मेरे बोतल मुंह से लगाने से पूर्व ही एक सज्जन बोल उठे,

''प्लीज, पानी।''

मैंने कहा, ''पानी नहीं है।''

''सिर्फ एक घूंट प्लीज''।

उसने विनती की। मैंने एक घूंट पीकर बोतल उसे दे दी। उसके एक और साथी ने भी उससे प्यास बुझाई। इसी तरह आई सी की मीठी गोलियों के लिये यात्री आपस में चिरौरी करते नजर आये। भोलेनाथ की यात्रा में कोई अमीर–गरीब नहीं था। सब भोले के दर्शनों के भिखारी थे।

गणेशटॉप से पूर्व आये नाले पर हमें विश्राम व नाश्ते के लिये अच्छी जगह नजर आई। इस स्थान का नाम वॉवबल है। यहां विशाल मैदान भी है तथा कई यात्री स्नान भी कर रहे थे। एस.पी. व मैंने यहां रुकना उचित समझा। मैंने ब्रश किया, हाथ मुंह धोये तथा पानी की बोतलें, लौटे अच्छी तरह धो–मांज कर, साबुन से धुले रूमाल में पानी छानकर, नदी के बीच से पानी लाकर भरे। हमारी निगाह रास्ते पर थी और ज्योहिं हरि, पारीक सा. आये, हमने उन्हें बुला लिया। सबने दाल, मठरी का नाश्ता किया। इसी समय यहां से छड़ी मुबारक यात्रा गुजरी। पारीक सा. ने टीवी कैमरामैनों से फोटो खिंचवाने का अच्छा अवसर देखा व हमें छोड़ छड़ी मुबारक के साथ हो लिये। हमने रामू, संजय का इंतजार किया। उनके आने, विश्राम करने एवं नाश्ता करने के बाद हम पांचों एक साथ आगे बढ़े। इस समय दिन के साढ़े दस बज चुके थे तथा आकाश में बादल छा रहे थे। यात्रियों के मन में पानी आने का अंदेशा पैदा हो गया था। यहां हमें अमरनाथजी से दर्शन करके लौटते यात्री मिले। वे जब यात्रा पर चले थे तो उन्हें पूरे रास्ते पानी गिरता हुआ मिला था और वे बहुत परेशानी से भीगते, ठंड से कंपकंपाते पहाड़ी रास्ते पर फिसलते हुये आगे बढ़े थे। उन्हें हमारी किस्मत पर रश्क था जो एकदम साफ मौसम में आगे बढ़ रहे थे।

आगे ऊंची पहाड़ी खड़ी थी। सुरक्षा बल के जवानों ने बताया कि यह गणेशटॉप है तथा यात्रा की सबसे ऊंची जगह है। दोपहर में इस गणेशटॉप पर चढ़ना हमारे लिये बहुत भारी हो रहा था। थोड़ी दूर चलने पर रामू की नाक में से खून आने लगा। मैं चिंतित हो उठा। उसे इलेक्ट्रॉल पिलाया, आई. सी की गोली व हाजमोला की गोली दी। उसका मुंह धुलवाया तथा सिर पर पानी भी डाला। इन सब इलाजों के चलते हम आगे भी बढ़ते रहे। खून बहुत धीरे–धीरे आ रहा था परन्तु हम ऊंचाई की ओर जा रहे थे अतः वायुदाब कम होने से खून की गति बढ़ने की संभावना दिख रही थी। इसके इलाज के लिये मैंने वहां तैनात मिलेट्री के जवानों से सलाह ली, कश्मीरी घोड़े वालों से, यात्रियों से पूछा पर किसी के पास इलाज न था। तब मैंने रामू के लिये घोड़ा करने का प्रयास किया परन्तु घोड़ा भी नहीं मिल सका। मेरा विचार था कि चढ़ाई पर सांस बहुत तेज

गति से चलती है, इससे नाक व गले में खुश्की आ जाती है। अतः घोड़े पर चलने में सांस की गति धीमी रहेगी। हम यथासंभव जल्दी गणेशटॉप पहुंच गये। यहां एक साइड पर बर्फ जमी थी और कई यात्री बर्फ उठा कर ला रहे थे। मेरे साथ रामू की चिंता थी अतः मैं जल्द से जल्द रास्ता पार करने पर ध्यान दे रहा था।

गणेशटॉप 14200 फुट ऊंचाई पर बहुत ही खूबसूरत दर्रा है। यहां से चारों ओर पहाड़ियों पर जमी हुई बर्फ दिखलाई देती है। हम गणेशटॉप से आगे की ओर पांचों साथी रुके। पानी पीया तथा बोतलें भरी। रामू को बहुत सारा पानी पिलाया। रामू ने स्वयं ने महसूस किया कि मैंने सुबह से पानी नहीं पीया शायद इसी कारण यह खून आया हो। कुछ भी हो थोड़ा और आगे बढ़ते ही रामू एकदम ठीक हो गया और हमारी चिंता दूर हुई। सामने एकदम गहरी खाई दिखाई दे रही थी। जितना चढ़े उससे भी ज्यादा उतार। रास्ता ऊबड़–खाबड़ और सारी घाटी में सैकड़ों रास्ते। यात्री कहीं से भी अपनी इच्छानुसार उतर रहे थे। इस उतार पर मुझे पंजों व घुटनों में दर्द महसूस हुआ। मेरे बाकी साथियों ने भी उतार को चढ़ाई से ज्यादा खतरनाक बताया। घाटी लगभग उतरने के बाद हम पांचों साथी एक जगह रुके। इस स्थान का नाम पोषपथरी है। यहां के लंगर में सभी ने कुछ–कुछ पेट में डाला। इसके बाद हम आगे बढ़े तो सब बिछुड़ गये।

परंपरागत यात्रा का विवरण

यात्रा का नाम : छड़ी मुबारक

प्रमुख महंत–दशनामी या दशमेश अखाड़ा श्रीनगर के प्रमुख महंत पूर्व में परमहंस महंत कृष्णानन्दजी सरस्वति, वर्तमान में दीपेन्द्रजी गिरी ।

1.पहला दिन–दशनामी अखाड़ा श्रीनगर से प्रातः यात्रा प्रस्थान एवं सायं विश्राम पापूर में।

2.दूसरा दिन–पापूर से प्रस्थान एवं बिजबिहारा में रात्रि विश्राम।

3.तीसरा दिन–बिजबिहारा से प्रातः चलकर दोपहर अनंतनाग पहुंचना एवं दोपहर विश्राम के बाद सायं चलकर मटन पहुंच रात विश्राम।

4.चौथा दिन– मटन से प्रातः चलकर ऐशमुकाम में रात्रि विश्राम।

5.पांचवां दिन–ऐशमुकाम से प्रातः चल पहलगांव में रात्रि विश्राम।

6.छठा दिन–दिनभर व रातभर पहलगांव में विश्राम (नोट पहलगांव में दो दिन विश्राम निर्धारित है।)

7.सातवां दिन–प्रातः पहलगांव से रवाना हो शाम चंदनबाड़ी पहुंच रात्रि विश्राम।

8.आठवां दिन–चंदनबाड़ी से चल पिस्सूटॉप,जोजबल होते हुये शेषनाग में रात्रि विश्राम।

9.नवां दिन– शेषनाग से प्रातः प्रस्थान एवं पंचतरणी में विश्राम

10.दसवां दिन–सावन सुदी पूर्णिमा अर्थात् ठीक रक्षाबंधन के दिन पंचतरणी से प्रातः चलकर संगम घाटी व अमरगंगा होते हुये दोपहर अमरनाथ गुफा पहुंच, दर्शन पूजन एवं वापस पंचतरणी आ रात्रि विश्राम।

पौष पथरी से पंचतरणी

संजय व हरिमोहन एक स्थान पर लेट गये। उनका मूड आराम करने का था। एस.पी. धीरे–धीरे पर लगातार बढ़ने में विश्वास करता है। रामू व मैं एक दूसरे का सहारा बने थे। प्रति आधा किलोमीटर पर हमें आराम की जरूरत पड़ती है। आगे बढ़ने पर रामू और मैं भी अलग–अलग हो गये। मैं एक छोटी पगडंडी पर इस धारणा के साथ उतर गया कि मुख्य रास्ता आगे जाकर इसमें ही मिल रहा है। पगडंडी में उतार–चढ़ाव नहीं है। मेरी यह धारणा तो ठीक थी परन्तु पगडंडी आगे इतनी संकरी हो गई कि मुझे साक्षात् मौत नजर आने लगी। इधर से मुख्यतः मिलेट्री वाले निकल रहे थे। यात्री बहुत कम आ–जा रहे थे। बीच में जाकर पगडंडी में ढलान आ गया व पगडंडी मात्र एक पैर रखने लायक रह गई। सामने से आ रहे लोगों को साइड भी देनी थी। मैं तो दो तीन जगह जमीन पर हाथ टेक बैठ गया। आधा किलोमीटर आगे आ चुका था अतः पीछे लौटने

की भी हिम्मत नहीं थी। एक मिलेट्री वाले ने टोका भी, इधर नहीं आना था। पर अब तो आ ही गये। नीचे दो–तीन सौ फुट गहरा नाला जहां बर्फ की परत जमी थी। ऊपर पचास फुट की सीधी चढ़ाई के बाद मुख्य रास्ता जिस पर अधिकांश यात्री आ–जा रहे थे। पर्वतारोहण का सच्चा रोमांच यहां हुआ। मेरी सी स्थिति में एक और अनजान यात्री मेरे पीछे चल रहा था। एक जगह 60^0 की चढ़ाई पर वह यात्री तो हिम्मत कर ऊपर मुख्य रास्ते पर पहुंच गया। मुझे दो तीन सौ कदम आगे 45^0 का ढाल दिखा। यहां से मैंने मुख्य मार्ग पर पहुंच राहत की सांस ली।

इसी अफरातफरी में रामू पता नहीं कहां रह गया था? मुख्य सड़क पर आकर एक जलस्त्रोत के पास पंद्रह मिनट बैठ मैं अपने साथियों की राह देखता रहा। साथी तो कोई मिला नहीं, हां एक बीमार यात्री की मदद करने का अवसर मिला। एक पदयात्री बुखार से पीड़ित उल्टियां कर रहा था। मैंने बोतल से पानी निकाल उसे कुल्ला करवाया। मेरे पास की दवाइयों की थैली निकाल पर इलेक्ट्रॉल के पानी के साथ उल्टी रोकने की गोली रेग्लान खिलाई। बुखार की दवाईयां उसके पास थी। उनसे धन्यवाद ग्रहण कर मैं आगे बढ़ गया। एक स्थान पर नाला पार करना होता है। शीतल जल, शीतल छाया और लेटने की जगह। मैं आंखे मींच कर सो गया। जगह ऐसी थी जहां से यदि मेरे साथी गुजरें तो मुझे देख लें। शीघ्र ही सत्यप्रकाश, संजय, हरिमोहन आ मिले। रामू शायद आगे निकल गया होगा। हाथ पांव धोकर शांति से नाश्ता किया। सबसे पहले एस.पी. तत्पश्चात मैं रवाना हुआ। हरिमोहन एस.पी. और मैं करीब आगे–पीछे बढ़ते रहे। संजय कहां चल रहा था हमें ध्यान नहीं रहा। 'पंचतरणी' मैं व हरिमोहन साढ़े तीन बजे साथ–साथ पहुंचे। एस.पी. हम से पांच मिनट पहले पहुंचा था। पारीक सा. व रामू ने एक टेंट में पर्याप्त जगह रोक रखी थी। थोड़ी देर में हम सब आपस में मिल गये। संजय की काफी देर तक फिक्र रही, जबकि वह तीन बजे ही यहां पहुंच कर साथियों को ढूंढ रहा था। हम उससे साढ़े चार बजे मिल सके।

कैसे–कैसे यात्री पदयात्रा कर रहे थे? एक दंतहीन वृद्धा, कोई अस्सी वर्ष की गणेशटॉप चढ़ते–चढ़ते एकदम घबरा गई। उसके साथी कहीं छूट गये थे। अनजान अन्य यात्रियों ने उसे पानी पिलाया, उठाया फिर दोनों ओर दो यात्री उसे कंधे के सहारे टॉप चढ़ाने लगे। एक पदयात्री मध्यप्रदेश के ग्रामीण अंचल से अपनी पत्नी व छः बच्चे–बच्चियों के साथ यात्रा कर रहा था। उसकी तीसरी यात्रा थी। पूर्व में वह श्रीनगर से बालटाल होता हुआ आता था। वहां से एक दिन में ही अमरनाथ दर्शन कर सायं वापस बालटाल पहुंच जाता था।

''अबकि बार प्रशासन ने मुसीबत कर दी। श्रीनगर–बालटाल से यात्रा ही बंद कर दी।''

हमें मिलेट्री के साये में यहीं खौफ था और वह पठ्ठा श्रीनगर से आना चाहता था। पारीक सा. ने भी सन् 1986 में श्रीनगर, सोनमर्ग, बालटाल होते हुये अमरनाथ पैदल यात्रा की थी। वे सुबह जल्दी चल शाम को वापस बालटाल पहुंच गये थे। कई साधुसंत इस यात्रा में आठ–दस वर्षों से प्रतिवर्ष आ रहे हैं। नागा साधुओं के लिये इस यात्रा का विशेष महत्व है। एक नागा साधु अश्लील शब्द बकता यात्रा पर बढ़ रहा था। यात्रियों में एक व्यक्ति लकड़ी के सहारे चल रहा था। उसकी जंघा के नीचे से टांग कटी हुई थी। कोई दस प्रतिशत यात्री महिलायें भी थी। कई दस–बारह वर्ष के बच्चे–बच्ची हांफते–कांपते आगे बढ़ रहे थे। कुछ यात्री गोद में बच्चे लेकर भी आये थे। कंडी–डांडी बहुत कम संख्या में नजर आई।

शेषनाग व गणेशटॉप जैसी ऊंचाई वाले स्थलों पर घास उगी थी एवं निचली घाटियों में सुदुर वृक्ष वनस्पति थी। इसके बावजूद जीव मात्र यहां बहुत कम था। यहां गर्मी में चरवाहे भेड़–बकरियां चराने आते हैं। अमरनाथ गुफा एवं पवित्र शिवलिंग की खोज में भी इन्हीं चरवाहों का हाथ है। एक बक्करवाल मलिक मुस्लिम चरवाहा आज से कोई साढ़े सात सौ वर्ष पूर्व भेड़ बकरी चराता इस अमरनाथ गुफा तक पहुंचा था। उसे प्राकृतिक शिवलिंग के दर्शन हुये। उसने इस बात को काश्मीर घाटी में प्रचारित किया। तत्कालीन समय में कश्मीर में हिन्दुओं का बाहुल्य था। हिन्दु सम्राट का राज्य था। यात्रा प्रचलित हो गई। खोज करने वाला चरवाहा व उसके के वंशज अमरनाथ भगवान को आये चढ़ावे में हिस्सेदार बने।

यहां प्रचलित कथा के अनुसार भगवान शिव श्रीनगर के दशमेश अखाड़े में अपनी अर्द्धांगिनी के साथ विराजमान थे। मां पार्वती ने उनसे अमरता की कथा सुनाने का आग्रह किया। इसके लिये एकांत की तलाश में भगवान पार्वती के साथ निकले। यदि और कोई इस कथा को सुन लेता तो सभी अमर हो जाते। श्रीनगर से अनंतनाग आकर भगवान ने सब नागों को अपने शरीर से छोड़ा। पहलगांव में बैल, चंदनबाड़ी में अपने अनुचरों से मुक्ति पाई। शेषनाग स्थान पर उन्होंने शेषनाग को भी त्याग दिया। पंचतरणी स्थान पर स्नान किया और पवित्र गुफा में जाकर पार्वती को अमरता की कथा सुनाई।

पंचतरणी

पंचतरणी में पहाड़ों के बीच एक विशाल मैदान बना हुआ है। यहां नदी बहुत चौड़ी है। यदि नदी का पानी आगे से रोक कर पांच फुट ऊपर उठा दिया जावे तो यहां भी शेषनाग जैसी झील बन सकती है। शेषनाग झील के आकार में शेषनाग की आकृति बताई जाती है। हम तो इस आकृति को नहीं खोज पाये। गतवर्ष आये यात्रियों ने बताया था कि इस वर्ष झील का स्वरूप पूर्ण रूप से बदला हुआ है। संभवतः प्रशासन ने बहाव में रूकावट पैदा करके झील में ज्यादा पानी रोका है। शेषनाग में रुकने के तम्बू झील से काफी ऊंचाई पर थे। इसलिये शायद ही कोई यात्री झील में स्नान करने गया हो। पंचतरणी में दरिया व तंबूओं में कोई दूरी नहीं थी। यात्री पानी पीने, फोटोग्राफी करने, स्नान करने, आदि कोमों से नदी में आ–जा रहे थे। चारों ओर ऊंचे पहाड़ों पर जमी बर्फ और झरनों का कलकल। इस नदी में पहाड़ों से कई झरने आ कर गिरते है। मैं गिनने लगा तो उनकी संख्या पांच से भी ज्यादा हो गई। पंचतरणी आने के पूर्व इस नदी को पार करना पड़ता है। कोई तीन फर्लांग के पाट पर एक दो जगह लकड़ी के छोटे पुल बने है। कुछ जगह वैसे ही बहाव में पत्थर डालकर रास्ता बना दिया गया है। नंगे पैर आयें तो स्वतः ही पंचतरणी के पानी से पैर धुल जायेंगे। पंचतरणी सिर्फ 11400 फीट की ऊंचाई पर है। यहां प्रशासन ने हेलीपेड़ व अस्पताल की भी व्यवस्था की हुई है। शेषनाग की अपेक्षा यहां सर्दी कम है। वायुदाब की भी समस्या नहीं है। पीने के पानी के लिये ऊपरी झरनों से पाइप लाइन डालकर दो नल लगाये गये हैं। बिजली की व्यवस्था जर्नेटरों द्वारा की गई है।

पंचतरणी में रात्री विश्राम

पंचतरणी में पारीक सा. का नेतृत्व प्रबल रहा। ज्यों–ज्यों हम लोग आते गये, वे हमें काम पर लगाते गये। रामू को तम्बू में रोकी गई जगह पर छोड़ा व स्वयं ने हमारा इंतजार किया। हरिमोहन के व मेरे आने के बाद मैं तम्बू में जम गया। रामू कंबल की लाइन में लगा व हरिमोहन लंगर पर पुड़ियों की लाइन में। हरिमोहन द्वारा लाया खाना चटपट खा गये। पारीक सा. दुबारा आये और हरिमोहन से पुनः खाने की लाइन में लगने को कहा। हरिमोहन ने नाराज होते हुये हुक्म उदूली की,

''मैं थक रहा हूं, थोड़ी देर सोऊंगा।''

आपस में टेंशन बढ़ सकती थी इसलिये मैं उठकर पारीक सा. के साथ टेंट से मुख्य सड़क पर आ गया। यहां हमें संजय मिल गया। उसे टेंट बताया एवं फिर हमारी सेवा में लगा दिया। दो घंटे लाइन में खड़े रहने के बाद एक कंबल मिला। खाना व पानी की कमी थी ही नहीं। शेषनाग वाली स्कीम से एक कंबल और लाने की प्रेरणा से मैं कंबल वाली लाइन की ओर गया परन्तु वहां की पंक्ति देख मेरे हौसले पस्त हो गये। कम्बल लेने का विचार त्याग थोड़ा आगे बढ़ा तो जोर से गाने–बजाने की आवाजें आ रही थी। छड़ी मुबारक के साथ ठहरे नागा संत नाच गा रहे थे। आसपास दर्शक यात्रियों का हुजूम था। जो कोई उन्हें रुपये पैसे भेंट देता, उसी का नाम लेकर

पंक्तियां गाना शुरू हो जाते। आगे पंचतरणी के अंतिम सिरे पर भी बी.एस.एफ. का लंगर लगा था। यहां हलुवा व पकौड़ी की व्यवस्था थी। पुड़ियां खाने के बाद भी इसकी गुंजाइश पेट में थी। लाइन भी छोटी थी। मेरा नम्बर आते–आते पकौड़ी समाप्त हो गई। एक दोना हलुवा लेकर लौटा। रास्ते में बासमती चावल की खुशबू आई। बहुत ही अच्छा पुलाव लंगर पर वितरित हो रहा था। साथ ही दाल कड़ी व अचार भी। लाइन यहां भी छोटी थी, अतः लाइन समाप्त होने के इंतजार में थोड़ा आगे खड़ा हो गया। एक स्वयंसेवक ने बांह पकड़कर मुझे लाइन में खड़ा कर दिया और कहा,

''लाइन में आओ, लाइन में।''

मेरे दिल में एक टीस सी चुभी और ग्लानी के मारे आंखों से आंसू टपकने को हुये। यही दिन देखने हेतु यहां आना था। नम्बर आने पर सामान्य से चौथाई चावल कागज पर रखवा कर तम्बू में साथियों के पास आ गया। इस समय सात बजे होगें और साथी बिस्तर लगाकर लेट गये थे। प्रसाद के रूप में हलुवा वितरित किया। एक दो साथियों ने पुलाव चखा। बाकी बचा मैंने जबरदस्ती खाया क्योंकि चावल कच्चे रह गये थे। साथियों की हलुवा पकौड़ी खाने जाने में भी कोई दिलचस्पी पैदा नहीं हुई, न ही बासमती चावल की मेरे द्वारा की गई प्रशंसा उन्हें उठने को प्रेरित कर पाई। थोड़ी देर और टहलने, पानी भरकर लाने के बाद मैं लेट गया। ओढ़ने के साधन पर्याप्त नहीं थे, अतः मैंने जरसी, मफलर के ऊपर रैनकोट, रैनपजामा व रैनटोपा बांध व पहन लिये थे।

पारीक सा. से यहां मेरी झड़प सी हो गई। हम पैर दर्द, बुखार आदि के लिये कॉम्बिफ्लेम (पेरासिटामोल + आइब्रुफेन) की गोलियां लाये थे। पारीक सा. को बारां में डॉक्टर ने बता दिया था कि थकान आने पर एक गोली खा लेना दौड़ने लगोगे। पारीक सा. ने एक गोली पिस्सूटॉप व शेषनाग के बीच, एक गोली शेषनाग में व एक गोली पंचतरणी में खा ली और वे हमारे से आगे–आगे हरकार्य में दौड़ते रहे। पारीक सा. हर जगह मुझसे भी गोली खाने के लिये कहते रहे परन्तु मैं यथासंभव कम से कम दवाईयां लेता हूं। पंचतरणी में उन्होंने बहुत जोर दिया।

''तू मेरी बात मानता ही नहीं।''

''आपकी क्या बात नहीं मानी।''

''एक गोली खा ले।''

''मैं आपकी यह बात नहीं मानूंगा, मेरा शरीर टूटने का कारण शरीर को भोजन नहीं मिलना है, बुखार नहीं। मैं अपने शरीर के बारे में आपसे बेहतर जानता हूं।''

''ठीक है, मत खा।''

पारीक सा. रूठ से गये और मैं भी चुप हो गया। पारीक सा. ने एक कमाल पंचतरणी में और किया। रात के साढ़े आठ बजे होंगे जब हममें से अधिकांश एक–एक झपकी ले चुके थे; राजस्थान का एक साधु तम्बू में जगह तलाशता हुआ आया। पारीक सा. ने पूछा,

''बाबा कंबल है क्या?''

साधु बोला, ''मेरे पास दो कंबल हैं।''

पारीक सा. ने कहा कि वे छहों सिकुड़ कर साधु बाबा को सुला लेंगे पर उसे हमें ओढ़ने हेतु उसका एक कंबल देना होगा। साधु बाबा बोले,

''एक कंबल में निर्वाह नहीं होता है। यदि आप एक शाल दे दें तो मैं कंबल दे दूं।'' समझौता हो गया। पारीक सा. ने एक शाल उसे दे दिया और कंबल हम तीन के शरीर को आधा ढकने लगा। मैंने जो पहनावा पहन रखा था उसके बाद तो मुझे कंबल क्या चादर की भी जरूरत नहीं थी। रात में पसीना आने पर मुझे बरसाती पायजामा तो उतारना ही पड़ा। रात में हमें नींद में खलल पड़ा। एक मिलेट्री वाला चिल्लाता हुआ आया,

''उठो सब उठो, कोई नहीं लेटेगा। इन यात्रियों को अंदर बिठाओ।''

पारीक सा. ने उठकर कहा, ''हम तो बहुत सिकुड़कर सो रहे है, आप देखिये तो सही।'' पर मिलेट्रीमेन टेंट ऊंचा कर–करके, टार्च जलाकर देखता हुआ चिल्लाता रहा,

''एक टेंट में तीस यात्री रहेंगे। बाहर कोई नहीं रहेगा।''

मैं उसके साथ आये यात्रियों से नम्रतापूर्वक बोला,

''आओ जी, आप अंदर चले आओ। आप हम एक ही लक्ष्य की ओर बढ़ रहे हैं। हम भी बैठ जाते हैं, आप भी बैठ जाना। जगह तो बस यही है।''

यात्री नम्रता से प्रभावित हो बोला, ''हां, यहां तो बिल्कुल जगह नहीं हैं। हम दूसरा देख लेंगे आप सो जाओ।''

इस तरह रात्रि दस साढ़े दस बजे आया यह तूफान टला। हमारे तम्बू में वास्तव में बिल्कुल गुंजाइश नहीं थी। करीब पच्चीस व्यक्ति सो रहे थे। हम नीचे की तरफ थे। इसलिये हमारे सिरों पर दूसरे यात्रियों के पैर व जूते लग रहे थे। अमरनाथ के पथ पर बढ़ने वाला हर कदम सिरमत्थे लगाने योग्य है ही। रात्रि बारह बजे तक यात्रियों के आने, तम्बू ढूंढने, हमारा तम्बू बार–बार ऊंचा करने एवं टॉर्च जलाने की प्रक्रिया होती रही। प्रातः काल एक सुरक्षाबल के व्यक्ति से मालूम हुआ कि यहां पांच हजार व्यक्तियों के ठहरने की व्यवस्था है और आज रात्रि बाईस हजार यात्री विश्राम कर रहे हैं। स्वाभाविक था यात्री खुले में भी सोये होंगे।

पंचतरणी से पवित्रगुफा की ओर

पारीक सा. प्रातः पांच बजे उठ, आगे की यात्रा हेतु तैयार हो गये। उन्होंने हमें भी जगाया परन्तु हम लोग आलस्य करते रहे। रात के डिर्स्टबेन्स से नींद भी प्रातःकाल अच्छी आ रही थी। कंबल सात बजे जमा होना था और साढ़े छः किलोमीटर चलकर दर्शन कर वापस ही तो आना था। जल्दी क्यों उठें? उधर पारीक सा. के तर्क भी वजनी थे। 'प्रातःकाल ठंडक में अच्छी यात्रा हो जाती है। जल्दी पहुंचने से गुफा पर भीड़ नहीं मिलेगी तथा दर्शन जल्दी होंगे।' नतीजा पारीक सा. हमें जगाकर कह गये,

''मैं तो चलकर दर्शन करता हूं, आप लोग आते रहना।''

पारीक सा. का इस तरह हमें छोड़कर जाना सभी को बुरा लगा। हम सब थोड़े देर–सवेर उठ साढ़े छः बजे तक यात्रा हेतु तैयार हो गये। सत्यप्रकाश ने आस्था जताई कि बाबा के दर्शन किये बिना मैं कुछ नहीं खाऊंगा। मैंने भी यही संकल्प लिया। लिहाजा यहां हमने कुछ खाया–पीया नहीं। कंबल जमा कराने में समय लगा ही और हम पांचों साथी करीब–करीब साथ–साथ ही रवाना हुये। चार किलोमीटर रास्ता चढ़ाई का था, दो किलोमीटर करीब उतार है। यहां भी रास्ता खतरनाक है तथा सावधानी पूर्वक आगे बढ़ना पड़ता है। पूरे रास्ते हमारी चर्चा के केन्द्र बिन्दु पारीक सा. ही रहे।

यहां टॉप पर रास्ते में मिलेट्री द्वारा पानी एवं चाय की व्यवस्था की गई थी। मैंने इनका उपयोग नहीं किया। यहां हमें सहयात्रियों द्वारा सीधे बालटाल का रास्ता भी बताया गया। यह संगम घाटी है। यहां से उतार शुरू होता है। पवित्र गुफा व अमरनाथजी की पहाड़ी सामने नजर आती है। ऐसा लगता है कि बस हम पहुंच ही गये। परन्तु ज्यों–ज्यों आगे बढ़ते हैं, रास्ता लम्बा होता जाता है। पंचतरणी से हम नदी के साथ–साथ आगे बढ़े थे। यहां टॉप से अमरनाथ से बहकर आई जलधारा अमरगंगा एवं पंचतरणी नदी का संगम होता दिखाई देता है। अब हमारा रास्ता नदी के दायीं ओर अमरनाथ से प्रवाहित अमरगंगा के उद्‌गम की ओर बढ़ता है। रास्ते में इस नदी पर एक ग्लेशियर बिछा है। ग्लेशियर से निकलता जल, ग्लेशियर की बनावट अपने आप में विचित्र है। हमें दो फर्लांग करीब इस ग्लेशियर की बर्फ पर चलना पड़ा। इस बर्फ के लिये ही खासकर नुकीली छड़ी आवश्यक है। यहां उतार चढ़ाव पर रिपटकर गिरने का पूरा खतरा है। हमारे साथ चल रहे यात्रियों में से दो यात्री रिपट कर गिरे भी। यहां बर्फ का मैदान सा बना हुआ है। अतः किसी भी तरफ चलने में कोई खतरा नहीं है। जैसे दोनों ओर से पहाड़ों ने हाथ फैला कर इस विशाल बर्फ खंड को थाम रखा है। जिसके नीचे से दरिया प्रवाहमान है। बर्फ को पार करने के बाद हम पुनः दरिया के किनारे चलने लगे। आगे थोड़ा खुला स्थान आया। यहां कई यात्री स्नान में लगे थे। हम पांचों साथियों ने कल भी स्नान नहीं किया था। मेरा तो दृढ़ संकल्प था ही कि स्नान कर धुले

कपड़े पहन बाबा के दर्शन हेतु जाऊं। लौटे की मदद से बर्फ के से ठण्डे पानी से स्नान करना विकट हिम्मत का काम है। जहां पानी डाला, शरीर का वही अंग सुन्न हो गया।

हरि, एस.पी. व मैने स्नान किया परन्तु रामू संजय स्नान करने की हिम्मत नहीं जुटा पाये। मंजन आदि तो सबने किया ही। स्नान के बाद मैंने सरसों तेल से मालिश की। कंघी आदि कर, हम पुनः आगे रवाना हो गये। सामने अमरनाथ जी की पवित्र गुफा थी, जहां यात्रियों की बहुत लम्बी कतार दिखाई दे रही थी।

अमरनाथजी में आकर हमें कश्मीरी लोग यात्रियों का सहयोग करते दिखाई दिये। यहां सिगरेट, बिस्किट की फुटपाथी दुकानें लगी थी। साथ ही भोले बाबा की पूजा हेतु यहां 'पत्रम्–पुष्पं–फलं' का विक्रय भी कश्मीरी मुसलमान कर रहे थे। हमारे पास एक–एक बैग व छड़ी सामानों के रूप में थी। अन्य यात्रियों के देखा–देखी हमने अपने बैग व छड़ियां रास्ते में लगी सामानों की लाइन के सहारे एक खुली जगह पर रख दिये तथा एक प्लास्टिक शीट से उन्हें ढक, पत्थर से दबा दिया। तत्पश्चात हम कतार में खड़े हो गये। हमने शिवजी को चढ़ाने हेतु एक–एक रुपये में जंगली फूलों का छोटा सा गुच्छा खरीद कर अपने–अपने हाथों में ले लिया। हमारा नम्बर पंक्ति में काफी पीछे था परन्तु कुछ गड़बड़ हुई और लोगों ने दूसरी पंक्ति बना दी। हम सब उस पंक्ति में पहुंच काफी आगे हो गये। यहां हमें मेटल डिक्टेटर से गुजारा गया तथा यात्रियों की फौरी चैकिंग भी की गई। अब हम दर्शनार्थियों की पंक्ति में खड़े धीरे–धीरे आगे सरकने लगे थे। अचानक पारीक सा. प्रकट हुये। हमने बरसाती से सामान ढक कर रखा था, उस बरसाती का प्रिंट तथा वहां रखे हमारे जूते छड़ियां पहचान कर पारीक सा. को पता लग गया कि हम आ चुके हैं और लाइन में लगे है। उन्होंने बाहर से आकर हमें ढूंढा और आवाज लगा कर ध्यान आकृष्ट किया। बोले,

''अच्छा बच्चों, मैंने तो दर्शन कर लिये हैं, अब मैं चलता हूं। आप लोगों को मैं पहलगांव में मिल जाऊंगा।''

मुझे बड़ी हैरानी हुई। यह क्या बात हुई? मैंने कहा,

''साथ ही चलेंगे, जल्दी क्या है?''

''अब आपको तो अभी दो–तीन घंटे लगेंगे। मैं जल्दी आ गया। आधा घंटे में दर्शन हो गये। तुम आलस करते हो।''

संजय बीच में बोला, ''पर पारीक सा. कंबल भी तो जमा करना था।''

इस प्रश्न का पारीक सा. के पास कोई जवाब नहीं था। उन्होंने पहलगांव में पैक किये सामानों की चाबियां एवं लंगर की रसीद भी हमारे से ले ली। उन्हें याद आया था कि उनकी राखियां सूटकेस में रखी है तथा यहां से चलकर रात तक पहलगांव पहुंच राखियां बांधकर रक्षाबंधन भी मना लूंगा। इस तरह पारीक सा. ने हमसे विदा ली। उनके इस व्यवहार से हम सबको दुःख हुआ। हमारा प्रतिनिधित्व करते हुये एक साथी ने कह ही दिया,

''पारीक सा. आप यह अच्छा नहीं कर रहे हो।''

उस समय पारीक सा. को न जाने क्या ही धुन सवार थी, वे हमें छोड़ कर लौट पड़े।

भोले के दरबार में

आज इक्कीस अगस्त 1994 रविवार सावन सुदी पूर्णिमा सं. 2051 अर्थात् रक्षाबंधन का पवित्र दिन है। रक्षाबंधन के दिन ही शिवजी ने इस गुफा में पार्वती जी को अमरकथा सुनाई थी। इस दिन ही दर्शन करने का सबसे ज्यादा महत्व माना गया है। हम बारां से रक्षाबंधन को दर्शन करने का लक्ष्य लेकर ही चले थे। हमारे पास एक दिन फालतू था जो जम्मू पहलगांव बस यात्रा में पूरा हो गया था। छड़ी मुबारक हमारे से पहले संभवतः पारीक सा. के दर्शन करते वक्त यहां पहुंच चुकी थी। अभी आकाश में हेलिकोप्टर मंडरा रहा हैं। हेलिकॉप्टर यहां बने एक हेलिपेड पर उतरा

है। उसमें से निकल दो–तीन वी.आई.पी. सख्त पहरे में बाहर आ रहे है। मैं पास खड़े मिलेट्री जवान से पूछता हूं,

''कौन हैं?''

''गवर्नर हैं।''

अच्छा राज्यपाल श्री के.वी. कृष्णराव जम्मू एवं कश्मीर। रास्ते में अफवाह सुनी थी कि आज दर्शन करने स्वयं प्रधानमंत्री श्रीनृसिंम्हाराव आ रहे हैं। इस बारे में यहां पूछताछ की पर प्रधानमंत्री जी का कार्यक्रम रद्ध हो गया। एक हैलिकोप्टर पूर्व में ही यहां खड़ा था। सामने से काफी सितारे टांगे एक वी.आई.पी. पूर्ण सुरक्षा में नीचे उतर रहे थे। मालूम हुआ जरनल हैं। फीते पर नाम लिखा था एस. एन. सरीन। बाबा भोलेनाथ की कृपा से दो महामूर्तियों के दर्शन एक साथ हो रहे थे। पहले एस. एन. सरीन ले. जरनल वायु पथ से दर्शन करने पधारे। इस खतरनाक इलाके में सख्त सुरक्षा होना लाजमी था ही। पंक्ति से अलग रास्ते से उन्हें सीधा दरबार में ले जाया गया। हैलिकोप्टर से गुफा तक जाने में भी कोई दो सौ फीट सीढ़ियों से जाना पड़ता है। यह रास्ता तो सभी को पैदल ही पार करना पड़ा चाहे गवर्नर हो या जरनल। सरीन सा. के दर्शन की प्रक्रिया में यात्रियों को रोका गया। जरनल अभी नीचे उतरे ही थे कि गवर्नर सा. आ गये। उन्हें भी आग्नेय अस्त्रों के साये में भीड़ से बचाते हुये गुफा तक ले जाया गया। उनके दर्शनों के वक्त पुनः हमें रोका गया। राज्यपाल महोदय ने यहां अपनी प्रतिष्ठानुरूप कार्य किया। वापसी में वे हम यात्रियों की पंक्ति के पास से गुजरे। उन्होंने कई यात्रियों से हाथ मिलाया तथा उनसे व्यवस्थाओं के बारे में बातचीत की। मेरे बिल्कुल आगे खड़े एक साधु ने राज्यपाल महोदय की तरफ एकदम हाथ बढ़ा दिया जिसे राज्यपाल महोदय को थामना ही पड़ा। मेरी भी हाथ मिलाने की मंशा थी पर अधूरी रही। महोदय का पूरा ध्यान मेरे पीछे पंक्ति में लगी एक ग्रामीण महिला की ओर था। उन्होंने टूटी–फूटी हिन्दी में पूछा,

''कहां से आई हो।''

महिला की जगह मैं बोल पड़ा,

''मंदसौर मध्य प्रदेश से।''

राज्यपाल महोदय महिला की ओर मुखातिब थे और उन्होंने मेरा जवाब नहीं सुना। दुबारा महिला ने कहा तो वे समझे नहीं। बाद में उनके साथ सादा वेश में चल रहे एक सुरक्षाकर्मी ने स्पष्ट किया तब वे समझ पाये।

''ओह एम.पी. से आये हो, अच्छा है ना, कोई तकलीफ तो नहीं हुआ।''

पीछे के यात्री बोले, ''हां साहब, बहुत अच्छी व्यवस्था है। कोई तकलीफ नहीं हुई। उससे पीछे खड़े मेरे जैसी विचारधारा के एक व्यक्ति ने व्यवस्था की कमियां गिना दी।

''अगली बार और सुधार करेंगे। कुछ तो रह ही जाता है।''

जैसे आश्वासन सुना दिये गये। मेरे मन में अफसोस था कि राज्यपाल ने मेरी ओर कदापि ध्यान नहीं दिया। मेरे पास सवाल थे ''क्या आप अगले वर्ष भी यात्रा करवा पायेंगे? और इस यात्रा में देश का कितना खर्चा हुआ होगा ?''

स्नान करने के बाद मेरी तबियत बिगड़ने लगी थी। सीढ़ियों पर आते–आते थकान के मारे चक्कर से आने लगे थे। बुखार आ गया था। लेकिन शुद्ध मुंह भोलेनाथ के दरबार में जाना था। मैंने गोली, आदि कुछ भी लेना या खाना मंजूर नहीं किया। लाइन में ठीक सी जगह देखकर बैठ जाता था। लाइन आगे बढ़ती तो उसके साथ लगता, फिर आगे बैठ जाता। पांच साथियों में मैं सबसे पीछे रह गया था। सुरक्षाबल वालों से झूठ बोल, संजय व रामू तक पहुंचा। हरिमोहन व एस. पी. चालाकी से बढ़ते काफी आगे पहुंच गये थे। दो घंटे धूप में पंक्तियों में खड़े रहने पर प्यास लगना स्वभाविक था। गुफा के साइड से एक स्वच्छ पानी का झरना पूरी लाइन के सहारे–सहारे बह रहा है। प्यासे यात्री पंक्ति से निकल समय–समय पर पानी पीने जाते रहे। खाने के लंगर यहां किनारों पर लगे थे पर दर्शनों के लिये जाते यात्रियों ने कुछ खाने का प्रयास नहीं किया।

गुफा के बिल्कुल नजदीक पहुंचने पर मानव निर्मित रेलिंग, सीढ़ियाँ, कोटा स्टोन का फर्श तथा प्लास्टर चढ़ी दीवारें आती है। शिवलिंग बनने के स्थल के आसपास चबूतरों का निर्माण किया गया है। अन्य हिन्दू तीर्थों की भांति यहां भी लोहे के सरिये एवं जालियां लगा विभिन्न देवों के स्थान बनाये गये हैं। वहां बैठे पुजारी यात्रियों को चढ़ावा हेतु प्रेरित कर रहे हैं। गुफा के अंदर पहुंचने पर हमें कबूतर भी दिखाई दिये। एक सफेद कबूतर देखते ही यात्रियों का हुजूम चिल्ला पड़ा,

''वो रहा, वो रहा।''

हमारे ठीक सिर के ऊपर गुफा में प्राकृतिक रूप से निर्मित एक कोटर में एक सफेद एवं एक चितकबरा कबूतर नजर आया। पास वाले यात्री ने बताया कि एक और सफेद कबूतर कोटर में छिपा है। कबूतर पक्षी इस गुफा में पांच नजर आ गये थे परन्तु सफेद एक ही दिखा। यहां कबूतर जोड़ा दर्शन को अतिशुभ माना जाता है। मान्यता है कि शिव पार्वती इस कलयुग में कबूतर–कबूतरी के जोड़े के रूप में यहां निवास करते हैं।

जहां प्रतिवर्ष शिवलिंग बनता था उस स्थान पर फूल मालाओं का घेरा बनाकर सजावट की गई थी। अभी पूरी गुफा में कहीं बर्फ का नामों निशान नहीं था, हाँ पानी की बूंदें अवश्य कई जगह से टपक कर यात्रियों को पवित्र कर रही थी। शिवजी के इस प्रतीक के पास ही एक अन्य प्रतीक माँ पार्वती का भी इसी तरह बनाया गया था। नंदी की यहां प्रस्तर प्रतिमा स्थापित है। अन्य प्रतिमायें व प्रतीक भी फूलमालाओं, वस्त्रों, लच्छा, डोरों आदि से सजायी गयी थी। देव दर्शन के अतिरिक्त भौतिक दुनिया के विज्ञापन भी यहां मौजूद थे। शिवसेना की कोई सेवा हमें अभी तक नहीं मिली पर यहां बैनर लगा हुआ था। एक लंगर का भी बहुत बड़ा बैनर मय व्यवस्थापकों के नाम पते के टंगा था। कई लोगों ने गुफा की विशाल प्राकृतिक दीवारों पर अपने नाम पते लिखे थे एवं व्यापार कार्ड चिपकाये हुये थे। मैंने भी अपनी फर्म में–अग्रवाल इण्डस्ट्रीज का छपा कार्ड पेंट के पीछे की जेब से निकालकर गुफा की एक दरज में फंसा दिया। यहां हम पांचों साथी एक साथ थे। हमने पवित्र गुफा के विभिन्न कोणों से फोटो लिये। गुफा में कैमरा ले जाने एवं वहां फोटो लेने की मनाही नहीं थी। चमड़े के सामान बेल्ट, कैमरा कवर आदि अवश्य गुफा के बाहर रखवाये गये थे। मंदिर के बायें कोने से एक जलधारा प्रवाहित हो रही है। इस गंगा का पानी कई यात्री अपने साथ लायी केटलियों में भर रहे थे। हमने यहां सिर्फ आचमन ही किया। इस मन्दिर में अर्पित करने को हमारे पास कोई पूजा सामग्री नहीं थी। नीचे से खरीदे फूल मुरझाकर कहीं गिर चुके थे। खुल्ले सिक्के चढ़ाकर काम चलाया। वापसी के रास्ते में एक मांगने वाले नागा साधु से हरिमोहन व मैंने रेजगारी ले ली। इस तरह दस–पांच रुपये दान के नाम पर हाथ से निकले। वापसी में आगे बढ़ने पर सरकार की ओर से सामान्य दवाइयों का एक काउण्टर लगा था। मैंने चक्कर, जी मिचलाने की शिकायत की। दो हरे रंग की छोटी–छोटी गोलियां दे दी। हरिमोहन ने हल्के सिरदर्द की शिकायत की। उसे भी वही गोलियां दी। पेट दर्द में वही गोलियां दी जा रही थी। मैंने पूछ ही लिया,

''क्या सभी को यही खिलाओगे?''

वहां उपस्थित कर्मचारी बोला, ''अधिकांश को पहाड़ी रोग होता है, इसी से ठीक होगा।''

यहां से आगे एक लंगर लगा था। दाल, चावल, रोटी उपलब्ध थी। मैंने एक रोटी व सब्जी ली परन्तु बुखार के कारण खा नहीं सका। आधी फेंकनी पड़ी। हमारे सभी साथियों ने यहां कुछ न कुछ खाया। हमारे सामानों के पास बिस्कुट बिक रहे थे। संजय ने तीन–चार डिब्बे बिस्कुट तथा अंकल चिप्स की थैली ले ली। बिस्कुट व चिप्स किसी तरह हलक के नीचे उतारे और ऊपर से पानी पिया। थोड़ी जान आई। चक्कर कम हुये। आधी गोली कॉम्बीप्लस निगली। पवित्र गुफा के दर्शनों के बाद सामान उठाकर, सफलता से उत्साहित, फोटोग्राफी करते हंसते–कूदते वापस लौटने लगे।

हमें शिवलिंग नहीं मिला। हमने दिल्ली से पंजाब केसरी अखबार लिया था। उसमें साढ़े नौ फुट के शिवलिंग का फोटो था। यहां पूछताछ पर मालूम हुआ कि दस तारीख तक शिवलिंग था। बाद में वातावरण गर्म होने से गल गया। जम्मू के एक अखबार ने खबर छापी कि आतंकवादियों ने

गुफा में गर्मी पैदा कर शिवलिंग समाप्त कर दिया है। पूरे हिन्दु समाज को उद्वेलित करने वाली बात थी। प्रशासन हरकत में आया और दूसरे दिन अखबार ने माफी मांगी। प्रशासन की तरफ से ऐसी अफवाहों का पुरजोर खंडन हुआ। यहां यात्रियों में भी यह अफवाह जोरदार तरीके से फैली हुई थी परन्तु हमारी टोली को इस पर कभी विश्वास नहीं हुआ।

वातावरण में परिवर्तन से हर वर्ष शिवलिंग का आकार घटता बढ़ता रहता है। कभी–कभी यात्रा के समय बिल्कुल नहीं भी रहता। सन् 1988 में भी ऐसा ही हुआ था। मेरे मन में इस बात का कोई मलाल नहीं था। एस.पी. ने कहा,

''भगवान ने हम पापियों को दर्शन देना मुनासिब नहीं समझा।''

हरिमोहन को दर्शन न होने का अफसोस हममें सबसे अधिक था। रामू, संजय, पारीक सा. व मेरी सेहत पर कोई फर्क नहीं पड़ा। अधिकांश मूर्तिपूजक धर्मप्रेमी अत्यधिक निराश थे। कई लोग आतंकवादियों को दोष दे रहे थे। कई पाकिस्तान को कोस रहे थे। जहां दो माह से सुरक्षा बलों का कब्जा था, परिंदा तक उनकी जानकारी के बिना पर नहीं मार सकता था, वहां ऐसी बातों पर विश्वास करना; अपनी सरकार पर अविश्वास करना ही तो था।

हमने रक्षाबंधन भी मनाया। मेरी दोनों बहनों ने मुझे कोटा में 15 अगस्त को ही राखियां बांधकर विदा किया था। वे राखियां मेरे अभी तक बंधी थी और मेरी हर विपत्ति से रक्षा कर रही थी। रामू, संजय, हरिमोहन के भी 15 अगस्त को राखियां बंध गई थी। हरिमोहन ने कुछ राखियां बैग में रख रखी थी। जो उसकी बहनों ने रक्षाबंधन के दिन बांधने के लिये दी थी। हम पांचों साथियों ने प्रातः स्नान के बाद उन्हें आपस में एक दूसरे को बांध आलिंगन कर बधाई दी थी। पारीक सा. भी अपने साथ रक्षायें लेकर आये थे जो उन्होंने पंचतरणी में एक मिलेट्री के जवान से बंधवा ली। इस पवित्र दिन हम सब ने हमारी बहनों द्वारा हमारे लिये की गई शुभकामनाओं का मन ही मन धन्यवाद दिया।

हमारे साथियों में संजय एवं सत्यप्रकाश को साधुओं से ज्यादा ही चिढ़ थी। जम्मू से पहलगांव के सफर में हमारी बस में बिना सीट बैठे दो साधुओं को उनके बहुत ताने सुनने पड़े थे। अंत में पहलगांव उतरते वक्त तो साधु ने गुस्से में न जाने क्या–क्या कह दिया था। यहां अमरनाथ में पंक्ति में लगने के मामले में भी साधुओं से लड़ाई हो गई। दस–बारह साधु पंक्ति तोड़कर हमारे आगे घुसने लगे थे। संजय व एस.पी. ने उन्हें बलपूर्वक रोक दिया। आवाज लगाकर पूरे यात्रियों को संगठित कर दिया कि किसी को भी मत घुसने दो। धक्का–मुक्की, गाली–गलौच तक हो गई। भीड़ ज्यादा थी। अतः हाथापाई होने से पूर्व ही स्थिति काबू में की गई। साधु उनके प्रथम दर्शन करने के अधिकार की दुहाई दे रहे थे। अन्य यात्री भी घंटों से खड़े थे। सुरक्षाबल वालों का रवैया साधुओं के प्रति नरम था। हम यात्रियों में भी मेरे जैसी नरम प्रवृति वाले यात्री थे। साधु लोग एक–एक कर पंक्ति में घुस गये। हरिमोहन व रामू को साधुओं से चिढ़ तो नहीं थी लेकिन वे अपने साथियों की तरफ पुरजोर तरीके से बोलते थे। पारीक सा. व मैं दोनों पक्षों को शांत करने का प्रयास करते। वापसी यात्रा में भी हमारी बस में बैठे साधुओं से हमारी यूथविंग की जबरर्दस्त लड़ाई हुई जिसे मैं आगे लिखूंगा।

अमरनाथ से वापसी

अमरनाथ से हमारी वापसी यात्रा साढ़े बारह बजे शुरू हुई। रास्ते में कई जगह फोटोग्राफी की। अब चूंकि उतार था अतः कदम स्वतः ही तेज गति से बढ़े और हम पांचों दो बजे साथ–साथ पंचतरणी पहुंच गये। मेरे चारों साथियों की तीव्र इच्छा आज ही शेषनाग पहुंचने की थी परन्तु मैं अपनी शारीरिक क्षमता और गत वर्षों के यात्रियों के अनुभव के हिसाब से यहां रुकना चाह रहा था। गत वर्ष दीनू (छोटा भाई) अपने पांच साथियों के साथ आया था तथा बारां के ही पवनजी व महेंन्द्रजी अदलक्खा की अलग टोली थी। वे यहां आकर साथ हो गये थे। वे शाम को ही

पंचतरणी से शेषनाग के लिये रवाना हो गये। साधनों के अभाव में दुःख पाते, भयग्रस्त रात्रि आठ से ग्यारह बजे तक शेषनाग पहुँचे थे। उनके एक बीमार साथी आनंद बंसल को तो रास्ते में एक तबेले में दो सौ रुपये देकर सोना पड़ा था। सारी बातों पर विचार कर मैंने समाधान प्रस्तुत किया कि एस.पी. व मेरे लिये घोड़ा कर लेते हैं फिर आगे बढ़ चलेंगे। एक घंटे तक घोड़े वालों से बातचीत करते रहे पर कोई नहीं पट पाया। भाई लोगों की मंशा मुझे आगे घसीटने की थी। बार–बार आग्रह कर रहे थे, 'घोड़ा आगे मिल जायेगा, बढ़ो' परन्तु मैंने उनकी बात नहीं मानी और तम्बूओं के पास आकर बैठ गया। अंत में मुझे कहना पड़ा,

''मैं तो आराम करूंगा, आपको आगे जाना हो तो जाओ। हम पहलगांव में मिल जावेंगे।''

साथी लोग दबाव बनाने के लिये थोड़ा आगे तक चले गये और मैं टांगे फैलाकर आराम करने लगा। थोड़ी देर बाद सभी साथी वापस आ गये और हमने सुबह ही जाने का निश्चय कर लिया। मेरे आगे न बढ़ने के पीछे तार्किक कारण थे। आज की यात्रा 13.5 किलोमीटर की हो चुकी थी। साथ ही दो घंटे पंक्ति में भी खड़े रहे थे। अन्य सब दिनों से ज्यादा श्रम हो चुका था। दूसरा पंचतरणी से शेषनाग के बीच गणेशटॉप तक विकट चढ़ाई है और कुल दूरी है, पंद्रह किलोमीटर। जिस व्यक्ति के बारह–पंद्रह किलोमीटर चलने में छक्के छूट रहे हों, उसे तीस किलोमीटर का साहस कैसे होता? तीसरा कारण भी सटीक था। पंचतरणी में हम दिन में पहुंचे थे। सोने के लिये तम्बू आसानी से उपलब्ध थे। शेषनाग पहुंचते–पहुंचते हमें रात हो जाती और संभवतः हमें बाहर सोना पड़ता।

वापसी में पंचतरणी

अमरनाथ से पंचतरणी रास्ते में हमें हमारे इलाके के यात्री अमरनाथ की ओर जाते हुये मिले थे। वे नाहरगढ़ के थे। उनका एक नौजवान साथी राधू जो बारां ही रहता है, एक दिन में ही चंदनबाड़ी से पैदल चलकर अमरनाथ पहुंच गया था। वह हमें पंचतरणी में रोड़ के किनारे एक तम्बू में मिला। उसका तम्बू खाली था। अतः हमारे आते ही उसने साथ रुकने का प्रस्ताव किया। भाई लोग (मेरे साथी) आगे जाना चाहते थे। अतः हम एक घंटे तक आगे मार्ग पर घोड़े वालों से माथापच्ची करते रहे। हमें वहां से प्रस्थान किया हुआ समझकर उसने उसके तम्बू में एक पंजाबी परिवार का सामान रखवा दिया। सामान पिठ्टू लेकर चल रहा था और उसके साथ एक पचासेक वर्ष उम्र की भद्र महिला थी। हमारे घंटे भर बाद वापस आने पर उसने महिला से कहा कि हमारे साथी आ गये हैं। अतः आप सामान दूसरे तम्बू में ले जाओ। महिला ने टालमटोल की तो उसने सामानों को एक कोणे से उठा दूसरे कोने में इस अंदाज से रखा कि महिला को बुरा लग गया। वह पढ़ीलिखी महिला थी। उसने राधू सिंघल से लड़ना शुरू कर दिया। राधू भी बोलने में तेज हैं और दोनों में वाकयुद्ध शुरू हो गया।

''अभी तेरे से जवान–जवान मेरे लड़के आ रहे हैं, तेरा सामान नहीं फिंकवा दिया तो? तूने क्या समझ रखा है, तेरे घर का तम्बू है, जो सामान उठाकर फेंक दिया। हमें भी बराबर का हक है।''

महिला का कहना भी ठीक था। राधू तीर्थयात्रा में महिला से जिस तरह वर्ताव कर रहा था, मुझे बुरा लगा। हमने अपना सामान उठाया और यह कहते हुये कि हम दूसरा तम्बू ढूंढ लेंगे, आप विवाद मत करो, आगे बढ़ गये।

दिन का समय था। इस समय अमरनाथ से लौटने वाले अधिकांश यात्री शेषनाग पहुंचना चाह रहे थे तथा शेषनाथ से आने वाले शीघ्र दर्शन की अभिलाषा में अमरनाथ की ओर बढ़ रहे थे इसलिये यहां रुकने वालों की संख्या कम थी। हमें एक बहुत अच्छा तम्बू मिल गया। इसमें भूमि का ढाल सिरहाने के अनुकूल था। नीचे मोटा तिरपाल बिछा था तथा तम्बू के ऊपर पानी रोकने के लिये एक अतिरिक्त तम्बू प्लास्टिक का ताना गया था। इस तम्बू में पूर्व में आठ साधु महात्माओं ने अपना डेरा जमाया हुआ था। उनके ऊपरी सिरे पर हमारा डेरा लग गया। यहां हमने अपने बिछौने बिछा दिये। सारा सामान होटल की तरह फैला दिया। कपड़े सुखाने हेतु बगल में उखड़े पड़े

तम्बूओं पर एवं तम्बूओं को बांधने में काम आ रही रस्सियों पर डाल दिये। मैं कपड़े सुखाने के काम में नियुक्त हुआ। धूप में बैठना मुझे बड़ा अच्छा लग रहा था। हमारे बाकी साथी घूमने–फिरने, लेटने या भोजन व्यवस्थाओं में लग गये। आज हमने कंबल नहीं लेने का तय किया। कंबल जमा कराने के चक्कर में हम प्रातः देर से यात्रा शुरू कर पाते थे। यहां रुकते समय ही हमारा निश्चय हो गया था कि कल शाम तक हमें अवश्य ही पहलगांव पहुंचना है। अतः यहां से निकलने में जल्दी करनी है। साथी पास के लंगर से सब्जी–पूरी ले आये। उदरस्थ करने के बाद भी पेट में जगह खाली बची। दुबारा लंगर से करारी पूरियां एवं दाल मोगर की सब्जी आई। यह खाना पूरी यात्रा में स्पेशल रहा और बड़ा सुस्वाद लगा। सभी ने तारीफ कर–करके खाया। खाने के बाद पानी की बोतलें एकदम खाली हो गयी। सारे साथी डकारें लेकर लेट गये। दिन बहुत बाकी था और इतनी जल्दी सोना मुझे अच्छा नहीं लग रहा था। मैं बोतलों में पानी भरने गया। रास्ते में बी.एस.एफ. के लंगर में तांक–झांक करने लगा। ड्यूटी पर तैनात एक जवान से मैंने कहा कि यदि कोई काम हो तो मैं मदद करूं। उसने मुझे एक डेढ घंटे बाद आने के लिये कहा। मैंने स्वीकृति दी और वापस तम्बू में लौट आया।

गतवर्ष मेरा छोटा भाई दीनू अपने मित्रों के साथ यात्रा पर आया था और उन लोगों ने कई लंगरों में काम करवाया था। उसकी दास्तान सुनकर मेरी भी इच्छा ऐसा करने की हुई थी। लेकिन तम्बू में जाने के बाद जब सूर्य अस्त हो गया, मेरे शरीर में झुरझुरी सी होने लगी। बुखार आ चुका था। मुझे एक गोली खाकर सोना पड़ा। जल्दी नींद नहीं आई। पांचों साथी काफी देर तक बातचीत करते रहे। पारीक सा. के व्यवहार एवं क्रिया कलापों पर व्यंग्य करके ठहाके लगाते रहे। किसी ने कहा,

''अच्छा हुआ पारीक सा. चले गये, वरना हमें हंसने का ऐसा सुअवसर कैसे मिलता?'

इस तम्बू में हमें एक परेशानी भी रही। साधु लोग बीड़ी, तम्बाकू, चिलम का धुंआ उड़ा रहे थे। जिसे हम बार–बार तम्बू का पर्दा उठाकर बाहर निकाल रहे थे। इसे रोकने हेतु बाबाओं से हमें अनुरोध करना पड़ा।

यहां पंचतरणी में भी नदी की रेती में दो हेलीपेड़ बने थे। जब हम अमरनाथ जी से पंचतरणी दोपहर में कोई दो बजे पहुंचे तब एक हेलिकॉप्टर यहां खड़ा हुआ था। मिलेट्री के जवान अपने कंधों पर स्ट्रेचर उठाकर ला रहे थे। पूछताछ करने पर पता चला कि पांच ज्यादा बीमार यात्रियों को हेलिकॉप्टर से भेजा जा रहा है। सरकार की इस व्यवस्था को देखकर हमें भी सरकार की तारीफ करनी पड़ी। घोड़ेवालों तथा पिट्ठूओं के लिये भी लंगरों में खाने की व्यवस्थायें थी। घोड़ेवाले तथा पिट्ठू लंगर में यात्रियों के साथ ही लाइन में लगकर भोजन प्राप्त करते थे। अमुमन लंगर वाले उन मुस्लिम मजदूरों से कोई सेवाकार्य जैसे पानी मंगवाना, सामान ढुलवाना, बर्तन धुलवाना आदि करवाने के बाद ही उन्हें भोजन देते थे। पिट्ठू एवं घोड़े वालों के सोने की कोई पृथक व्यवस्था नहीं थी। स्थानीय घोड़े वाले आसपास दूर अपने घोड़ों के साथ रात व्यतीत करने चले जाते थे। कई घोड़े खुले में बंधे हुये थे। पूरे रास्ते कई जगह घास उगी थी। जो इन मूक जानवरों का पेट भर रही थी। घोड़ेवाले व पिट्ठू अपने यात्रियों से कंबलों एवं खाने की व्यवस्था का अनुरोध करते हुये भी देखे गये। बातों के बीच हम कोई आठ बजे निंद्रादेवी के आगोश में चले गये।

पंचतरणी से शेषनाग वापसी यात्रा

22 अगस्त 94 मंगलवार प्रातः चार बजे हमारी पार्टी सोकर उठी। तम्बू में अंधेरा था परन्तु इतना घना नहीं। हमने हमारे पास मौजूद टॉर्चों की सहायता से अपने सब सामान पैक किये तथा आगे बढ़ने को तैयार हो गये। इस तैयारी में हम नाहरगढ़ के हमारे इलाके के यात्रियों से मिलना भी भूल गये। रास्ते में काफी आगे निकल जाने पर मैंने अपने साथियों से हमारी इस चूक के बारे में जिक्र किया। तब हरिमोहन ने बताया कि शाम को वह राधू से मिला था तब राधू को

बुखार था एवं उसके साथी अमरनाथ जी से दर्शन करके भी नहीं लौटे थे। अब हमारा लौट कर उनके हाल जानने जाना संभव नहीं था।

पंचतरणी से निकलते ही मुझे महसूस हो गया कि आज भी शरीर साथ नहीं दे रहा है। एस.पी. का भी हाल कमोवेश मेरी तरह ही था। शुरू में हम सोचते रहे 'सबसे आगे हम ही चल रहे हैं' परन्तु नदी की पुल से हमारे से आगे भी यात्री जाते दिखाई दिये। हमारे पीछे तो यात्रियों की पंक्ति चल ही रही थी। सुरक्षा बलों की पूर्व में घोषणा थी कि रात्रि में किसी को सफर नहीं करने दिया जायेगा। इसलिये हम चलने से पूर्व थोड़े आशंकित थे कि कहीं हमें प्रभात होने तक रोक न दिया जावे लेकिन पंचतरणी में तम्बूओं से आगे काफी दूर तक रास्ते में हमें कोई सुरक्षा व्यवस्था नहीं मिली। पंचतरणी में चांदनी छिटकी थी और नदी के पार अंधेरा था। यहां पहाड़ का फैलाव उत्तर दक्षिण था तथा चंद्रमा पश्चिम में था। अतः आगे के अधिकांश रास्ते में पहाड़ की छाया से अंधेरा हो रहा था। उस अंधेरे में भी कुछ प्रकाश (चंद्रमा की रोशनी) ऊंचे पहाड़ों पर जमी बर्फ में परावर्तन होने के कारण आ रहा था। हमारे हाथों में टॉर्च थी पर उसे बहुत कम काम में लेना पड़ा। चलने में मुझे काफी जोर लगाना पड़ रहा था और चढ़ाई पर तो पूरा बदन दर्द करने लगता था। ऐसे में मैंने अपने साथियों से कह दिया था कि यदि घोड़ा मिल जावे तो दो घोड़े कर लो ताकि हमारा आज ही पहलगांव पहुंचना सुनिश्चित हो जावे। रामू, संजय आगे–आगे चल रहे थे। पंचतरणी से कोई तीन किलोमीटर आगे उन्होंने दो घोड़े पांच–पांच सौ रूपये में शेषनाग तक के लिये कर लिये। हमारे आने तक उन्होंने घोड़े वालों को रोककर रखा और हमें देखते ही घोड़े पर बैठने हेतु कहा। मैंने पूछा,

''कितने में किये?''

''पांच–पांच सौ में, शेषनाग तक।''

''तीन सौ रेट है पंचतरणी से शेषनाग तक और हम तीन किलोमीटर तो आ ही गये। शेषनाग तक तीन सौ या पिस्सू घाटी तक पांच सौ प्रति घोड़ा ले तो चल नहीं तो हम पैदल ही चले जायेंगे।''

मैं ऐसा भाषण देकर आगे बढ़ गया। मुझे उम्मीद थी कि घोड़ेवाले अभी पीछे–पीछे आयेगें लेकिन वे तो बड़बड़ाते हुये पंचतरणी की ओर चले गये। एस.पी. ने कहा,

''भाई सा. बैठ लेते जी, लग जाते पांच सौ।''

मैंने आश्वस्त किया, ''आगे और मिल जायेंगे।''

मेरा आश्वासन ठीक था, घोड़ेवाले बहुत मिले पर रास्ते के हिसाब से रेट कम नहीं हुये। ठेठ गणेशटॉप के नीचे भी घोड़े वाले पांच सौ मांगते रहे और हम इतने चल लिये, अब किस तरह पांच सौ दे देते? मेरा वह निर्णय पूरे रास्ते मुझे पछतावा देता रहा।

कई जगह रुकते–चलते गणेशटॉप के नीचे पहुंचे। वहां हमने अपना सामान निकाल कर नाश्ता किया। अभी सुबह के साढ़े सात ही बजे थे। सामने तीन हजार फीट ऊंची सीधी चढ़ाई है। यहां आकर सभी यात्रियों की हिम्मत पस्त हो गई थी। घोड़ेवाले मनमानी रेट में यात्रियों को बिठा रहे थे। यहां यात्रियों के एक ग्रुप ने घोड़ेवालों के एक ग्रुप से झगड़ा भी कर लिया। घोड़े वालों ने सवारी लेने से मना कर दिया था। जो यात्रियों को बुरा लगा। झगड़े के बाद भी घोड़े वाले सवारी बिठाने को तैयार नहीं हुये। यहां हमें एक नई बात पता लगी। घोड़े पर कुछ भी तय करके बैठ जाओ, गन्तव्य पर घोड़े को मिलेट्री वालों के सामने ले जाकर खड़ा कर दो। मिलेट्री वाला अपने आप वाजिब पैसे दिलवा देगा। कुछ यात्रियों ने यह तरीका अपनाया और फायदे में रहे। हमें तो भोलेशंकर को पैदल ही यात्रा करानी थी। उठते–बैठते साढ़े नौ बजे गणेशटॉप पर पहुंचे। वहां से उतार शुरू हो गया था। नीचे नदी पार करके आगे जाना था। आते वक्त भी हम एक घंटा यहां रुके थे। वापसी में भी हाथ–मुंह धोये, नाश्ता किया। नहाने का प्रस्ताव थोड़ी ठण्डक होने के कारण स्वीकृत नहीं हो सका। इस नदी का पानी पीने से मेरे शरीर में स्फूर्ति सी आ गई। नाश्ता भी यहां अच्छा गले के नीचे उतर गया और आगे की मेरी यात्रा अति सुगमता से हो गई।

शेषनाग तक मुख्यतः उतार ही है। नदी से शेषनाग तक हम पांचों साथी करीब–करीब साथ–साथ रहे। मेरे पैर भी बड़ी फुर्ती से उठ रहे थे। गणेशटॉप के बाद से शेषनाग तक एक ही नदी तीन बार पार करनी पड़ती है। शेषनाग इस नदी के आसपास की दो पहाड़ियों पर आबाद किया गया था। हम दक्षिणी ओर के शेषनाग को छोड़कर आगे बढ़ गये। हमारा विचार यहां खाना खाकर एक घंटा किसी तम्बू में जाकर लेटने का था, लेकिन यह क्या? यहां तो सभी लंगर उठ चुके हैं। खाने–पीने का कोई साधन नहीं था। अब आराम करके भी क्या होगा? मन में एकदम चिंता बैठ गई। तुरन्त आगे बढ़ना है। यहां झील एवं बर्फीली चोटियों का शानदार दृश्य है। चार–पांच फोटो विभिन्न कोणों से लिये एवं आगे बढ़ गये। पुनः मेरा मूड घुड़सवारी का हुआ पर हमें सस्ता घोड़ा नहीं मिला। जॉजबल से पूर्व एक स्थान पर पहाड़ी झरना मुख्य मार्ग में ही गिर रहा था। हम सब आधा घंटा यहां रूके। यहां हमने नाश्ता किया तथा पानी की बोतलें भरी। एक सहयात्री को कैमरा देकर झरने के साथ दो फोटो पांचो साथियों ने एक साथ बैठकर खिंचवायें। हमारे नाश्ता निकालने के दौरान एक लड़का पुराने कपड़ों में हमारे से पैसे (भीख) मांगने लगा। पूरे अमरनाथ रास्ते में यह पहला अनुभव था। शायद अब सुरक्षा बलों द्वारा कुछ ढील दिये जाने से वह हमारे तक पहुंच सका। मैंने बेग में से उसे मीठी मठरी निकाल कर दी। जो उसने जेब में भर ली। हमारी भाषा वह बहुत कम समझ पा रहा था और उसकी भाषा हमारे पल्ले नहीं पड़ रही थी। उसने नाम बताया, फिर जाति बकरवाल, ऊपर भेड़ें चराता है, मां बाप भी साथ है। स्कूल छोड़ दिया, शायद एक दो साल पढ़कर। झरने के ऊपर कहीं पहाड़ी पर रहते है। अस्थाई निवास बनाया होगा। इस झरने पर विश्राम के समय कई स्थानीय घोड़े वाले हमारे पास आये। वे ढाई सौ रूपये पिस्सू घाटी के मांग रहे थे। हम दो सौ से आगे नहीं बढ़े और सौदा नहीं पट सका। शेषनाग नदी के किनारे जॉजबल में लंगर चालू था। यहां की चावल की खीर बहुत अच्छी लगी। सत्यप्रकाश को चावल के नाम से चिढ़ थी। उसने दाल–रोटी ली। थोड़ा आगे बढ़ने पर स्नान के लिये अच्छी जगह लगी। संजय–रामू ने बताया कि जाते समय वे यहीं नहाये थे। हम पांचों ने अपने बैग व लाठियां जमीन पर रख दी तथा नहाने को तैयार हो गये।

शेषनाग नदी के किनारे हालांकि गंदगी बहुत थी, फिर भी यहां बैठना बहुत अच्छा लग रहा था। हंसी मजाक के साथ नहाने–धोने का कार्यक्रम चलता रहा। समय की कमी थी। हमें यहां ढाई बज चुके थे। मंजन, मालिश हुआ। मौजे, रूमाल, तौलिये, अंडरवियर, बनियान साबुन लगा–लगा कर धोये। पानी एकदम ठंडा था। नहाने के लिये लोटे की मदद ली। तेल, कांच, कंघा भी हमारे पास था। बस धुले हुये पेंट शर्ट नहीं थे। सभी प्रकार से तरोताजा होने में एक घंटा लग गया। नहाते समय भी एक घोड़े वाला इधर आ निकला। उसने आगे चलने से इनकार कर दिया। कश्मीरी गबरू जवान था। राणाप्रताप की तरह घोड़े पर सवार। घोड़ा नदी में उतार दिया। कोई तीन फुट पानी उबड़खाबड़ सतह। घोड़ा तुरन्त दूसरे पार पहुंच, ऊंचे पहाड़ पर चढ़ने लगा। थोड़ी देर में दोनों ओझल हो गये। हमें तो सामने कोई बस्ती नजर नहीं आ रही। हम साथियों में इस घुड़सवार की चर्चा हुई। आतंकवादी होने का संशय हुआ। प्रशासन ने यात्रा जाते समय जिस तरह की सुरक्षा व्यवस्था की थी, आते वक्त पंचतरणी से ही हमें वैसी सुरक्षा नहीं मिली। यहां आतंकवादी आसानी से वारदात कर सकते थे पर ईश्वर कृपा से ऐसा कुछ नहीं हुआ।

इस स्थान से पिस्सूघांटी चार–पांच किलोमीटर दूर है परन्तु हमें ऐसा लग रहा था कि बस यह रही। पांचों साथी अपना–अपना सामान कंधों पर लाद पिस्सूटॉप मिलने की बात कह कर रवाना हो गये। घोड़ेवालों से पूरे रास्ते भावताव करते चल रहे थे। अब हमारा मकसद थकान से डरना नहीं वरन् घुड़सवारी का आनन्द लेना हो गया था। थोड़ी देर में ही संजय–रामू काफी आगे, हरिमोहन बीच में, मैं तथा सत्यप्रकाश कुछ ही दूर पर सबसे पीछे हो गये। यहां हमारे पैर बड़ी फुर्ती से उठे। चार बजे हम पिस्सू टॉप पर पहुंचे तो रामू, संजय को बहुत आश्चर्य हुआ।

'बड़ी जल्दी आ गये, अभी तो हमें पांच मिनट ही हुये हैं।'

स्वादिष्ट खीर के पेट में जाने या शेषनाग नदी में स्नान का प्रताप था। पिस्सूटॉप की हरी घास पर सब लेट गये। यहां कश्मीरी चाय की होटल से हमने तीन चाय मांगी। जाते समय यहां

होटल नहीं थी। आज यहां एक युवक सिगरेट भी बेच रहा था। शायद यात्रा प्रतिबंध समाप्त हो गया हो। बेकार से कपों में बेकार सी चाय, जबरदस्ती सुड़की। चाय वाले ने आकर बारह रुपये मांगे, तो मुंह से निकला,

''लूट रहा है स्साले।''

उसे दस का नोट पकड़ाया। वह दो रुपये और मांगने लगा और हम चार रुपये वापस मांगने लगे। वह चला गया और दोनों ने सब्र किया। पिस्सूटॉप से पिस्सूघांटी के पेंदे तक सीधा एक किलोमीटर का उतार है। हम सभी भाग–भाग कर इस पर उतरे। नतीजा मेरे घुटने में दर्द होने लगा और पांवों के पंजे फटने से लगे। उतरने के बाद गलती महसूस हुई पर अब किया भी क्या जा सकता था? घांटी के अप्रतिम सौन्दर्य के फोटो लिये और रील समाप्त हो गयी। नई रील हमारे पास थी परन्तु पुरानी रील कैमरे से नहीं निकल पाई और आगे हमारी फोटोग्राफी बंद हो गई।

चंदनबाड़ी तक हम बिना रुके आ गये। पहला–पहला लंगर देखते ही खाने के लिये रुक गये शायद आगे कोई लंगर नहीं मिले। संजय–रामू रोटियों के चक्कर में काफी देर खड़े रहे। फिर दाल–चावल की दो प्लेट ले आये। हमारे साथी चावल खाने में कमजोर थे। आधी प्लेट चावल झूठन में छोड़ने पड़े और जो प्रयुक्त किये गये उनका अधिकांश भाग मेरे पेट में गया। इस लंगर में हमने अपनी छड़ियों का त्याग किया। अब छड़ियों की आवश्यकता समाप्त हो गई थी। अधिकांश यात्री यहां अपनी छड़ियां छोड़कर जा रहे थे। लंगर वाले इन छड़ियां का उपयोग भट्टी में ईधन के रूप में कर रहे थे। भट्टी पर बहुत बड़ा तवा चढ़ा था। जहां यात्रियों के लिये रोटियां पकाई जा रही थी। थोड़ा आगे बढ़ने पर चंदनबाड़ी का स्थाई निर्माण दो–तीन होटल दिखाई दिये। यहां चाय, बिस्कुट, ब्रेड तथा ठंडे पेय पदार्थों के लिये भारी भीड़ उमड़ी पड़ी थी। पंद्रह रूपये की एक के हिसाब से पांच कोल्ड ड्रिंक्स की बोतलें हमारे द्वारा भी ली गई। मैं सिर्फ आधी बोतल पी पाया। महंगाई के कारण यहां हमने और कोई सामान नहीं लिया। यात्रा जाते समय यह सब होटल दुकानें बंद थी। अब खुली हुई हैं। अब हमें पहलगांव व आगे घाटी में भी बाजार खुले मिलने की संभावना हो गई।

सड़क के किनारे आगे बढ़ने पर बाजार नजर आया। यहां विभिन्न सामानों की कई दुकानें खुली हुई थी। आगे कई लंगर कार्यरत थे। सी.आर.पी. एफ. के लंगर पर बहुत अच्छी व्यवस्था थी। गरमागरम पुरी और आलू की सब्जी, आचार। हम लंगर के अंदर जाकर बैठ गये और सबने भरपेट खाना खाया। पूरी चंदनबाड़ी में प्रशासन की ओर से लाउडस्पीकर लगे थे। हमने घोषणा सुनी कि अमुक घोड़ेवाला अमुक नाम पते की महिला को लेकर प्रातः शेषनाग से चला था, वह महिला को लेकर कंट्रोलरुम पहुंचे, उसके परिजन इंतजार कर रहे हैं। निश्चित ही प्रशासन घोड़े वाले को अपने स्तर पर भी खोज रहा होगा। हमारी मित्र मण्डली में इस विषय पर भी खूब ठहाके लगे।

बस स्टेण्ड थोड़ा आगे था। वहां बस नहीं थी और सवारियों की भारी भीड़ थी। पहलगांव से बसें आती थी और तुरंत भर जाती थी। एक बस हमारे सामने आई और खड़ी होने से पहले ही उसमें ऊपर–नीचे सवारियां चढ़ गई। एस.पी. अब खर्च करने के पूरे मूड में आ गया था।

''अब तो भाई सा.... आराम से चलेंगे, लग जायेंगे पैसे जो लगेंगे।''

उसने एक टैक्सी वाले से बात कर ली। सौ रुपये सवारी और छः सवारी लेगा। पांच हम भर गये, एक और आ गया। सोलह किलोमीटर सीधा उतार और छः सौ रुपये किराया। मजा था टैक्सी वाले का। हमारे बैग डिक्की में डाल दिये थे। पहली बार इतने आराम से बैठकर यात्रा करने को मिल रहा था। एस.पी. और मैं ड्राइवर के पास बैठे थे। बातचीत शुरू की। टैक्सी वाला दिल्ली से सवारियां लेकर आया था। उसकी सवारियां दर्शन के लिये ऊपर गई है। फालतू बैठा वह कमाई करने में लग रहा है। पहलगांव से खाली आना पड़ेगा तथा टैक्सी चंदनबाड़ी में खड़ी करनी होगी। समय की भी चिंता थी। हम सवा पांच पर टैक्सी में बैठे थे। हमें छोड़कर छः बजे से पूर्व ही उसे पहलगांव से चंदनबाड़ी लौट पड़ना था। छः बजे बाद इधर नहीं आने देंगे। पूरे रास्ते में कहीं ट्राफिक जाम के कारण नहीं रुकना पड़ा। हम सभी बातें करते आये। सहयात्री ने भी पूरा साथ

दिया। पहलगांव में आज चहल–पहल नजर आई। दुकानें भी खुली थी। टैक्सी ने हमें प्रशासन द्वारा बसाई गई तम्बू नगरी के मुख्य द्वार पर उतार दिया। उसे सधन्यवाद पांच सौ रुपये देकर हम तम्बू नगरी में घुस गये। आज हमारी जांच नहीं हुई। जांच अधिकारी तो था परन्तु अब कार्य में लापरवाही आ गई थी। यहां हमने कार्य विभाजन कर लिया। एस.पी. व रामू अपने बैग छोड़कर तुरन्त ही पारीक सा. को ढूंढने मुख्य सड़क पर आगे बढ़ गये। संजय, हरि व मैंने एक तम्बू में जाकर बैग डाले। हरि को वहां छोड़कर हम वापस लौटे। माइक पर सुबह जम्मू की गाडियों की बुकिंग के लिये आवाजें लगाई जा रही थी। मैंने संजय को लाइन में लगा दिया। पीछे की सीटें मिल रही हों तो थोड़ा रुक लेना। संजय को छोड़ मैं भी मुख्य सड़क पर आ गया। पारीक सा. मिल जायेंगे तो उन्हें तम्बू तो बताना ही पड़ेगा। आधा किलोमीटर दूर चौराहे पर सत्यप्रकाश खड़ा हुआ मिला।

''रामू पारीक सा. को ढूढने आगे गया है। मैं यह नाका रोक कर खड़ा हूं।''

थोड़ी देर बाद रामू व पारीक सा. भी आ गये। आते ही पारीक सा. ने बोलना शुरू कर दिया।

''मैं तो सुबह से इंतजार कर रहा हूं। कई चक्कर लगाये, चलो आगे लंगर देखते है, कितनी अच्छी व्यवस्था है?''

वाह क्या लंगर है!

हम पारीक सा. के साथ लंगर देखने गये। इस लंगर में ही पारीक सा. ने हमारे सामान रखे थे। लंगर की व्यवस्थायें कल्पनातीत थी। शादी के मंडप जैसा सजा हुआ विशाल मैदान था। जो स्थाई रूप से चार दीवारी या लकड़ी के बाड़ से घिरा था। मुख्य दरवाजे पर बहुत भीड़ थी। एक ऊंची स्टूल पर एक नौजवान चमकदार काले वस्त्र पहन कर, शिवजी का अनुचर भूत जैसा बना नृत्य की स्टाइल में लहरा रहा था। उसके हाथ में मेटल डिक्टेटर की छड़ी थी। जो प्रत्येक अंदर घुसने वाले व्यक्ति के शरीर पर तीव्रगति से घूम रही थी। पांच कदम आगे बढ़ने पर अन्य दो नौजवान जामा तलाशी ले रहे थे। मुख्य द्वार से अंदर घुसने पर दाई और एक बड़ा काउन्टर कार्यालय स्टाइल में लगा था। वहां एक बहुत चौड़े मैदान में भोजन करने वालों की पंक्तियां लगी थी। एक ओर भोजन बन रहा था। एक तरफ भगवान का मंदिर, अमरनाथ जी की झांकी थी जहां निरंतर कीर्तन हो रहा था। एक साइड एक विशाल शामियाना एवं कई छोटे बड़े तम्बू यात्रियों के ठहरने हेतु लगे थे। उसके बगल में पूर्णरूप से सुरक्षित लॉकरूम था। जिसमें लोहे की एंगलों से बनी दराजें थी। लॉकरूम का एकमात्र दरवाजा तीन फुट का था। पूरी लंगर व्यवस्था में भारी भीड़ थी। हमारी इच्छा सामान निकाल कर साथियों से मिलने की थी। पारीक सा. हमें घुमाना चाहते थे। हम लंगर से निकल मुख्य रोड़ पर आ गये और पारीक सा. के पीछे–पीछे पहलगांव घूमने चल दिये। हमने अखरोट तलाश किये। एक सरकारी दुकान खुली थी। उसने कल सुबह दस बजे अखरोट मंगा कर देने के लिये कहा जिसे ले जाना संभव नहीं था। पहलगांव के हृदय स्थल में चायपान की इक्की–दुक्की दुकान छोड़ सब कुछ बंद था। हम एक तिराहे से वापस पीछे वाले रास्ते पर घूम गये और नदी किनारे स्थित गुलाब गार्डन में बेरियर लांघ कर घुस गये। गार्डन अति सुन्दर था। यहां से आसपास चारों ओर की हरीभरी पहाड़ियों का सीन बहुत सुन्दर लग रहा था। पारीक सा. गार्डन देख अपनी जवानी में पहुंच गये।

''यह स्थान है घूमने का, पत्नि के साथ आओ और यहां पड़े रहो। देखो पहाड़ों का क्या सौन्दर्य है। इधर यहां काटेज बनी हुई है, इसमें जोड़े हनीमून मनाने आते हैं। काटेज का किराया भी होटल से कम नहीं है। पिछली बार मैं पहलगांव आया था तो इस गार्डन में कई जोड़े बाहों में बांहे डाले घूम रहे थे। कई दिनों से गार्डन की सार संभाल नहीं हो रही फिर भी देखो कितना खूबसूरत है।''

पारीक सा. मन की दबी भावनायें प्रकट करते रहे और हम मन ही मन मुस्कराते सुनते रहे। एक स्थान पर कुछ देर के लिये हम बैठ गये। यहां पारीक सा. ने हमारे से बिछुड़ने के बाद की गाथा सुनाई। वह गाथा संक्षेप में इस प्रकार है।

पारीक सा. की गाथा

पारीक सा. दस बजे हमारे से बिछुड़कर अमरनाथ से वापस लौटे थे। उनका इरादा उसी दिन पहलगांव पहुंचने का था। वे पंचतरणी में रुके नहीं, सिर्फ चाय लेकर आगे बढ़ गये। चार–पांच बजे करीब वे थके–हारे शेषनाग पहुंचे और सीधे प्रधान साहब के लंगर में चले गये। वे एक तम्बू में घुस गये। वहां हाड़ौती संभाग की एक औरत ने उन्हें घुसने से रोका और कहा ''इधर जगह नहीं है। हमारी पूरी बस की सवारियां है। यह हमने रोक रखा है।''

पारीक सा. ने उसकी हाड़ौती वाणी सुन उसे हाड़ौती में जवाब दिया और वहीं जम गये। वे लोग खानपुर साइड के थे। पारीक सा. पुरी साग खा, चाय पी कर सो गये। न जाने कब प्रधान जी ने एक मुसाफिर को ओर उनके पास सटवां सुला दिया। पारीक सा. को रात को नींद खुली तो सिर्फ बदन के कपड़ों में अपने पास सोये एक यात्री को ठिठुरते हुये पाया। यात्री ने कहा,

''मुझे कुछ औढ़ने को दो, मुझे ठंड लग रही है।''

पारीक सा. अपने शॉल व लोई उसे उढ़ाकर अंधेरे में पेशाब करने चले गये। वापस आने पर उन्हें दिशाभ्रम हो गया और वे काफी देर तक तम्बू के पास खड़े हो इधर–उधर झांकते हुये अंधेरे तम्बू में अपने बिस्तर का अनुमान लगाते रहे। इतने में जागते हुये एक प्रौढ़ ने उन्हें आवाज देकर कहा,

''क्या देख रहे हो?''

पारीक सा. ने कहा ''मैं अभी उठकर गया था, पर मैं समझ नहीं पा रहा कि मेरा बिस्तर कहां है।''

स्मरण रहे पारीक सा. की टॉर्च जाते समय ही खराब हो गई थी। किसी तरह उस व्यक्ति की मदद से पारीक सा. ने बिस्तर ढूंढा और उस पर लेट गये। अभी वे लेटे ही थे कि आवाज सुनकर हाड़ौती पार्टी में से एक युवा व्यक्ति की नींद खुल गई। पारीक सा. से रात में बात करने वाली महिलाओं वाली साइड पर प्रधान साहब ने उन्हें सुला दिया था। हाड़ौती युवा यह जान चिल्ला पड़ा,

''तुम यहां कैसे आये? इधर तो लेडीज सो रही है। चलो बाहर निकलो। हम तुम्हें यहां नहीं सोने देंगे। उठो,उठो।''

इस तरह पूरे तम्बू में जाग और शोर हो गया। जिसे सुन प्रधान जी तम्बू के पास आ गये। उन्होंने पूरी घटना जानकर पारीक सा. से पूछा

''तुम कौन हो?''

पारीक सा. ने कहा ''मैं दिन में आप से मिला था। पेशाब करने गया तो थोड़ा भ्रमित हो गया। इन सज्जन ने मदद की और ये सज्जन गलत तरीके से चिल्ला रहे हैं।''

अब तो प्रधान जी हाड़ौती युवा पर उबल पड़े।

''निकलो, बाहर यहां से। यात्रा पर भी ऐसी क्षुद्र भावना लेकर आते हो।''

बड़ी मुश्किल से मामला शांत हुआ और पारीक सा. के मुंह से निकल ही गया।

''आखिर तुमने हाड़ौती वाली बता ही दी न।''

शेषनाग में प्रातः जल्दी उठ चार बजे वे आगे बढ़ने को तैयार हो गये। उन्हें थकान बहुत ज्यादा थी। अतः उन्होंने चंदनबाड़ी तक के लिये एक घोड़ा पांच सौ रूपये में तय कर लिया। अभी वह घोड़े पर बैठे ही थे कि एक मिलेट्री वाले ने घोड़ेवाले को बुलाकर घोड़ा मांगा और कहा कि इस यात्री को चंदनबाड़ी छोड़कर आओ। तीन सौ रूपये ले लेना। घोड़े वाले ने थोड़ी सी ना–नुकर की थी कि मिलेट्री मेन ने झट से दो बेंत मार दिये। पूरी घटना देख पारीक सा. घोड़े से उतर पड़े

और वह घोड़ेवाला मिलेट्री के आदेशानुसार उस बीमार यात्री की पांच सौ की जगह तीन सौ रूपये में चंदनबाड़ी ले गया। अब पारीक सा. को मजबूरन पदयात्रा करनी पड़ी। वे नौ बजे चंदनबाड़ी और वहां से मिनी बस में बैठ दस बजे पहलगांव पहुंच गये। पहलगांव में वे सीधे लंगर में गये जहां हमारा सामान रखा हुआ था। उस लंगर में जाकर उन्होंने आराम किया। फिर नदी के किनारे बैठ उनकी धर्मबेटी को मुजफ्फरनगर एक लंबा भावुक खत लिखा। बाद में उन्होंने अपने कपड़े धोये एवं स्नान किया। पारीक सा. ने अपने कल किये गये स्नान की गाथा भी मुझे सुनाई। वे यहां बारह बजे करीब (कल दोपहर) स्नान करने आये थे। उस समय यहां कई साधु संत भी नहा रहे थे। चार–पांच नौजवान युवकों की एक पार्टी उसी समय स्नान हेतु आई और उन्होंने कपड़े उतार कर पत्थरों पर रख दिये। पारीक सा. जब स्नान कर निकले तो उन्होंने पत्थर पर लटकी पेंट, जो पानी में गिरने को थी, सीधी कर दी थी। उन्होंने कपड़े पहने व चलने को तैयार हुये, तभी वहां शोर मच गया। युवकों की पेंट गायब थी। उसमें पांच हजार रुपये थे। शक में उन्होंने अधिकांश साधु संतों की जो उस वक्त स्नान कर रहे थे, तलाशी ले डाली तथा एक साधु को तो पीट भी दिया। इसके बाद उनका शक पारीक सा. की ओर गया। पारीक सा. को भी अपना सब सामान कपड़े वगैरहा दिखाकर तलाशी देनी पड़ी। इसके बाद पारीक सा. ने उन्हें समझाया,

''बच्चों आप लोगों ने अपने कपड़े असावधानी से पत्थरों पर डाल रखे थे। मुझे तो पूर्ण शंका है, तुम्हारी पेंट उछलते पानी की चपेट में आकर बह गयी है। तुम व्यर्थ ही साधुसंतों पर शंका कर रहे हो।''

इसके बाद नदी के दोनों ओर दूर–दूर तक खोज की गई तथा पूरे पहलगांव में लगे मिलेट्री के लाउडस्पीकर पर इस बात का ऐलान कराया गया। पारीक सा. को पता नहीं पेंट मिल सकी या नहीं पर उन पर शक तो हो ही गया। शायद चतुर्थी का चंदा देखा होगा। इसके बाद पारीक साहब हमारा इंतजार करते रहे। उन्होंने कई चक्कर चौराहे के एवं तम्बूओं के भी लगाये। आखिर शाम छः बजे हम मिल सके।

वापसी में पहलगांव

सात बजे करीब हम विशाल लंगर में पहुंचे और वहां से हमने अपने सामान लॉकरूम से निकलवाये। बाहर सड़क पर आते ही पारीक सा. की अनिच्छा के बावजूद हमने एक अधेड़ परन्तु अच्छे से दिखने वाले व्यक्ति को पांच रुपये प्रति नग में आधार शिविर तक ले जाने के हमारे सारे सामान थमा दिये। यह व्यक्ति शक्ल, शरीर व वेशभूषा से कदापि कुली नहीं लग रहा था। उसने आते ही सामान ले जाने का प्रस्ताव किया तो हम आश्चर्यचकित हो गये। उसके पास सामान बांधने के लिये कुलियों की तरह रस्सी आदि भी नहीं थी। सूटकेस उसने सिर पर रखवाये, एक छोटा सूटकेस बगल में दबाया और उसी हाथ में एक सूटकेस थामा। दूसरे कंधे पर बैग लटकाकर उस हाथ को ऊंचा कर ऊपर के सूटकेस पकड़ कर वह आगे बढ़ा। मुझे बड़ा अटपटा लगा। मैंने कहा,

''चाचा चार ही ले चलो, एक मैं ले लेता हूं, नहीं जा पायेंगे।''

लेकिन वह विनम्रता पूर्वक सामान लिये बढ़ता रहा। पांच रुपये नहीं मारे जाते क्या? आधारशिविर के मुख्यगेट तक पहुंचने में उसने तीन बार सामान उतारे व रेस्ट लिया। रामू व मैं कुली के साथ थे। पारीक सा. व सत्यप्रकाश पुनः पीछे रुक गये थे। मुख्य दरवाजे पर पहुंच कर उसने सामान उतार दिये। मैंने आगे तम्बू में ले जाने के लिये कहा तो उसने मिलेट्री वाले पहरेदार की तरफ इशारा कर दिया। अर्थात यहां से आने जाने की अनुमति नहीं है। कुली को पच्चीस रुपये देकर मैंने आसपास अपने साथियों को देखा। हरिमोहन नाराज सा खड़ा था। मैंने कहा,

''आओ तम्बू में।''

''यहां तो कोई जगह नहीं है। अब मैं अकेला यहां कैसे जगह रोकता? आप सब तो घूमने–फिरने में, मौज–मस्ती में लगे थे।''

स्पष्ट रूप से हरिमोहन हमारे देरी से आने के कारण नाराज था। मुझे ऐसी आशंका भी थी पर पारीक सा. नहीं माने थे। अब हरिमोहन की नाराजगी दूर करनी पड़ेगी। मैंने निहायत नम्र लहजे में पूछा,

''सामान कहां पड़े है?''

कुछ देर टालमटोल के बाद वह कुछ ठंडा हुआ उसने एक टेंट की तरफ इशारा किया। यह वह टेंट नहीं था जिसमें हमने सामान रखे थे एवं हरि को रखवाली छोड़ा था। वहां पहुंचने पर देखा कि संजय भी नाराज सा. बैठा हुआ है। स्पष्ट ही उसे भी यह बात बहुत अखरी थी। दोनों से बिना कुछ कहे हम चार दोषी साथियों ने अपने पांच नग तम्बू में लाकर रखे। उन्हें घूमने जाने की छूट दी और कहा, ''अब आप लोग आराम से आ जाना हम यहां बैठे हैं।''

शाम का धुंधलका घिर आया था। तम्बूओं में रोशनी की व्यवस्था नहीं थी। बाहर बड़े–बड़े बल्ब लटका कर प्रकाश किया हुआ था। उसमें से ही धुंधला सा प्रकाश का रेशा तम्बूओं में आ रहा था। हरिमोहन व संजय के तम्बू छोड़ने से पहले मैंने उनका गुस्सा ठंडा कर दिया था और प्रेम से हमारे बाद उनके द्वारा किये कार्यों की जानकारी ले ली थी। दोनों ने बहुत ही अच्छा काम किया। संजय ने लाइन में लगकर बस के छः टिकट सुबह के ले लिये थे। टिकट आगे की सीटों के मिल गये, यह अच्छा संयोग रहा। हरिमोहन को मैं सामानों के पास लिटा गया था। उसे वहां बदबू आती महसूस हुई। उसने टॉर्च जलाकर आसपास देखा तो सामानों के बिल्कुल ही निकट गंदगी पड़ी हुई थी। उसे घिन हो आई। उसने वहां से सामान समेटे और अकेला ही सारे सामानों को उठाकर दूसरे तम्बू में साफ सी जगह देखकर रखा। इसके बाद वह निरंतर पहले वाले तम्बू एवं मार्ग पर निगाह बिछाकर हमारी राह देखता रहा। राह देखते–देखते आंखे थक गई और गुस्सा बढ़ता चला गया। संजय के टिकट लेकर वापस आने पर उसने उसे भी हमारे द्वारा किये जा रहे अन्याय की जानकारी दी। उसका भी मुंह फूल गया। हमारे आने के बाद दोनों घूमने निकल गये। बाकी रहे हम चार साथियों ने अपने यथासंभव ओढ़ने–बिछाने के सामान बाहर निकाल कर फैला दिये। यह हिप्पी टेन्ट (तम्बू) बहुत बड़ा, हॉल जैसा विशाल था तथा हमें खूब आराम से सोने की जगह मिल गई थी। नीचे हरी घास से आच्छादित जमीन ऊबड़–खाबड़ अर्थात अपने मूल रूप में ही थी। रात को बेडशीट, दरी बिछाकर सोने पर इस बात का अहसास बहुत ज्यादा हुआ।

हिप्पी टेंन्ट में रात्रि विश्राम

हिप्पीटेंट तम्बू में व्यवस्थायें जमाने के दौरान मैं पानी भरने नलों की तरफ गया तो मुझे मातृभाषा हाड़ौती सुनाई दी। पांच छः युवकों का दल था। हाथ मिलाये एवं परिचय हुआ। सांगोद तहसील के किसी गांव के युवकों की पार्टी थी। परदेस में अपने गांव का कुत्ता भी प्यारा लगता है। हमें परस्पर मिल बहुत प्रसन्नता हुई लेकिन उनका व हमारा साथ महज रात भर का रहा। उन्हें अलग बस के टिकट मिले थे। हां, तम्बू में हाड़ौती वाणी देर रात तक गूंजी। हमारे इस तम्बू में पहुंचने का मार्ग बड़ा विकट था। सीधे मार्ग पर पांच फुट ऊंची बाउंड्री फांदकर जाना पड़ता था। यहां प्रकाश की कोई व्यवस्था नहीं थी। दूसरा मार्ग लम्बा पड़ता था एवं मार्ग में कई सारे रस्सों को पार करना पड़ता था। वे रस्से इन्हीं तम्बूओं का आधार थे।

हरि व संजय के जाने के कुछ देर बाद ही अन्य साथी भी धीरे–धीरे तम्बू से खिसक गये थे। व्यवस्थाओं का जायजा लेने के नाम यह निष्क्रमण हुआ। मैं अकेला काफी देर तक तम्बू में आंखे खोलकर लेटा रहा। सारे सामान की रखवाली भी करनी थी। धीरे–धीरे साथी लौटे। सब अपने हिसाब से चाय, नाश्ता या खाना खाकर ही आये थे। मुझे कुछ खाने की इच्छा नहीं थी।

फिर भी पारीक सा. द्वारा लाई एक रोटी मीठी चटनी से खाई। सुबह सात बजे बसें रवाना होनी है। सभी बसें लिद्दर के मुख्य पुल के आसपास की सड़कों पर खड़ी होंगी। हमें सुबह जल्दी उठ साढ़े छः बजे हमारी 210 नम्बर की बस ढूढंनी है एवं उसमें सामान जमाने हैं। इन सब व्यवस्थाओं की जानकारी ले सभी साथी करीब साढ़े नौ बजे तक वापस आ गये थे और हम सब अपने बिस्तरों पर सो गये। हमारे सिरहाने पर टॉर्च रखी थी। जो रात में एक बार मैंने लघुशंका जाने की लिये प्रयोग की। पर्यटन विभाग के दफ्तर के उस सुन्दर गार्डन में लघुशंका करने में बड़ा संकोच हो रहा था परन्तु सुबह उठकर पाया कि वह गार्डन तो रात में शिवभक्तों द्वारा शौचालय में तब्दील कर दिया गया है।

पहलगांव से वापसी

23 अगस्त 1994 बुधवार। पारीक सा. सदा की भांति सबसे पहले करीब पांच बजे उठ गये। उनके जगाने पर हम आलस्य करते रहे। पारीक सा. चाय–नाश्ता करके आये, और आते ही आकाशवाणी सुना दी।

''सात बजे बसें रवाना होगी, सारी बसें चौराहे के आसपास खड़ी है। हमें ठीक छः बजे यहां से चल देना है।''

अब हम सभी साथियों में स्फूर्ति आ गई। बोतलें एवं केटली के पानी से मुंह धोये, ब्रुश किया। स्नान का न तो समय था न हिम्मत। सामान समेटने में कोई समय नहीं लगा। तम्बू से बाहर निकलते ही गार्डन में ही कुली मिल गया। वैसे आश्चर्य था इतने सारे कश्मीरी कुली आधार शिविर में आ कैसे गये? पांच सूटकेस व एक बैग कुली को देने लायक था। रेट पांच रूपया प्रतिनग थी ही और सामान बस ढूंढ़कर बस तक पहुंचाना था। बस में सामान ऊपर चढ़ाने वाले अलग हैं। हम कुली को सामान बंधवाकर साथ चले। पांचों भारी सूटकेस व एक बैग कुली ने अपने शरीर पर धारण कर लिया। तीन सूटकेस व एक बैग रस्सी से बांध पीठ पर टिका लिया व रस्सी सिर में फंसा ली। दो सूटकेस हाथ में ले लिये। रस्सी खुलने या टूटने के कारण बस तक पहुंचने में रास्ते में तीन बार सामान बिखर गये। हमें जल्दी थी, हर बार उसकी मदद की। हमारी बस सबसे आखिर में लिद्दर नदी के पुल के इस पार खड़ी थी। कुली के साथ इतनी देर रहने में आदत के मुताबिक मैंने उससे कश्मीर की स्थिति पर चर्चा की।

''नेता हम गरीबों के दुश्मन हो रहे हैं। इन्हें तो पार्टी वाले पैसा दे देते हैं। हम साल भर हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। अल्लाह जाने खर्चा कैसे चलेगा? इधर मिलेट्री वाले हम पर विश्वास नहीं करते। कश्मीरियों में इज्जत नाम की चीज तो रही नहीं। भारत में रहें चाहे पाक में, पर अमन होना चाहिये। अमन होगा तभी यात्री यहां आयेंगे।''

स्मरण रहे पर्यटन विकास निगम के आधार शिविर में कुलियों की पूरी जामा तलाशी ले, नाम–पते नोट कर अंदर घुसने दिया जा रहा था। पहलगांव के निवासी आज कमाई का आखरी दिन जान पूरे मनोयोग से काम पर आ जुटे थे। दुकानें भी पहले के अनुपात में आज काफी खुली थी। यदि आतंकवाद से सुरक्षा का पूर्ण विश्वास हो जाता तो निश्चित ही ये लोग यात्रियों का पूरा सहयोग करते। यहां के मजदूरों के व्यवहार, वक्तव्यों से हमें लगा अब कश्मीर में आतंकवाद के अंतिम दिन आ गये हैं। मैंने तो सभी साथियों में घोषणा भी कर दी, 'साल छः महीने में पंजाब की तरह से कश्मीर से भी आतंकवाद पूरी तरह समाप्त हो जायेगा।'

हमने कुली को एक रूपया नग अतिरिक्त देकर पांचों सूटकेस व बैग बस की छत पर रखवा ताला लगा दिया। नीचे हमारे पास आवश्यक सामानों के चार बैग कंधों पर लटकाने वाले

रह गये। हमारे आने तक सभी यात्री सीटों पर अपना–अपना स्थान ग्रहण कर चुके थे। धीरे–धीरे सात भी बज गये, बसें आगे बढ़ने के कोई आसार नजर नहीं आये। हमारी बस जिस सड़क पर खड़ी थी उसके दोनों ओर गार्डन था तथा पीछे कोई सौ कदम दूर लिद्दर नदी बह रही थी। हम बोर होकर नीचे उतर गये। बस के बिल्कुल पास एक छोटा नाला था। मैंने उसमें साबुन से मल–मल कर मेरा रुमाल धोया। रुमाल धोने से पहले उससे पोंछ–पोंछ कर जूते चमकाये। पारीक सा. भी नीचे उतर आये थे। हम दोनों थोड़ा और आगे बढ़े। लिद्दर नदी के पुल पर जा पहुंचे। पारीक सा. ने जानकारी दी,

''आतंकवादियों द्वारा यात्रा से पूर्व यह पुल उड़ाया गया था। जिसे अड़तालीस घंटों में मिलेट्री ने वापस बनाकर तैयार कर दिया।''

इस पुल के पार खुली जगह थी जहां रात्रि में सैकड़ों वाहन खड़े हुये थे। पुल के पार एक टैक्सी यूनियन की कार्यालयनुमा बोड़ी रखी थी। पास ही एक अन्य बोड़ी पर चाय व बिस्किट बिक रहे थे। एक पानवाला भी आज कमाई करने में मशगूल था। नदी के पास पुल के नीचे कई यात्री स्नान कर रहे थे। हमारे मन में भी स्नान की इच्छा हुई परन्तु 'बस इतनी थोड़े ही रुकेगी' इस आशंका से हमने स्नान की कोशिश नहीं की।

गुफ्तगू – ए – कश्मीर

हमारी अमरनाथ यात्रा पूरी हो चुकी थी पर कश्मीर के और आश्चर्य हमें देखने बाकी थे। बस वाले यहां से भी नं. दो की सवारियां भर रहे थे। बस में पीछे ही पीछे वाली लम्बी सीट छः सवारियों के लिये होती है। ड्राइवर कंडक्टर उसमें एक सवारी और ठूंसना चाह रहे थे। टिकटधारी जागरूक नागरिक थे। वे उलझ पड़े और सातवीं सवारी नहीं बैठने दी। ड्राइवर ने धमकी दी,

''आप हमारा सौ रूपया का नुकसान कर रहे हो। हम आपको देख लेंगे।''

यात्री ने और जोर से प्रतिवाद किया। इस तरह काफी देर झगड़ा हुआ। बोनट पेटी एवं आगे कंडक्टर सीट पर एवं गैलरी में बैठकर यात्रा करने के लिये एक परिवार बस में चढ़ा था। ड्राइवर एक और यात्री को ले आया। यात्री ने पूछा,

''जगह कहां है?''

ड्राइवर ने बताया, ''ये सब सवारियां खन्नाबल उतरेंगी, तब आपको यहां बिठा दूंगा।'' खन्नाबल का नाम सुन मेरे कान खड़े हो गये। यह तो घाटी में ही है। मैं परिवार के मुखिया से बतियाने लगा। खन्नाबल अन्नतनाग से थोड़ा सा आगे ही है।

''आप वहां क्यों जा रहे हो?''

''हमें श्रीनगर जाना है, वहां से बस मिलेगी।''

मेरा दिमाग एकदम घूम गया। ये कश्मीरी नहीं है, जरूर मुसलमान ही होंगे। श्रीनगर में तो कोई हिन्दू हैं ही नहीं।

''तो आप इधर पहलगांव में अभी काम करने आये होंगें?''

''नहीं, हम तो अमरनाथ जी दर्शन करने गये थे।''

''तो फिर अब श्रीनगर क्यों जा रहे हो।''

''हम वहीं रहते हैं।''

''पर आप न तो कश्मीरी हो न मुसलमान।''

''हां, हम मध्यप्रदेश में नीमच जिले के फलां गांव के रहने वाले कोरी जाति के हैं।''

अब आश्चर्य की बारी हमारी थी। मध्यप्रदेश का हिन्दू श्रीनगर में रहता है, वह भी सपरिवार, पत्नी व छोटे–छोटे बच्चों के साथ।

''आप वहां कितने दिनों से है?'' मैंने फिर पूछा।

''मुझे चार साल हो गये। मै वहां ईंटों के भट्टे पर काम करता हूं।''

''आपको वहां कोई खतरा व डर नहीं?''

''नहीं जी नहीं, ये सब फालतू बातें हैं। पूरी कश्मीर घाटी में ईटों के भट्टों पर म.प्र. के हिन्दू मजदूर ही काम करते हैं। पूरी घाटी में कोई बीस–तीस हजार मजदूर होंगे। घाटी में सबको पता है हम हिन्दू है।''

''आपके मालिक (नियोक्ता) आपकी हिफाजत करते होंगे?''

''कुछ नहीं, वैसे भी आतंकवादी आम आदमी की तरफ नहीं देखते। उनकी लड़ाई तो सरकारी आदमी और मिलेट्री से ही है।''

''आप यात्रा पर आये हो और आतंवादियों ने यात्रा पर पाबंदी लगाई हुई है। इससे क्या आपके मालिक व आतंकवादी नाराज नहीं होंगे?''

''हम तो हर वर्ष आते हैं, छुट्टी लेकर आते हैं, सबको पता है, नाराज क्यों होंगे?''

''आतंकवादियों को आप लोग पहचानते होंगे।''

''हां, सरेआम स्टेनगन, बम लेकर गली, मोहल्लों, बाजारों में घूमते रहते है। किसी की हिम्मत नहीं उनसे कुछ कहने की। मिलेट्री वाले कभी निकलते हैं तो छुप जाते हैं। बच्चा–बच्चा जानता है, कौन मिलिटेन्ट है, किसके पास कितने हथियार हैं, पर कोई उनसे दुश्मनी क्यों मोल ले? हां, यहां शासन हिन्दुस्तानी सरकार का नहीं मिलिटेन्ट का ही चलता है।''

''वे जनता से लूट–खसोट, दादागिरी करते हैं। क्या जनता इससे मिलीटेंटों के खिलाफ नहीं हो रही है?''

''अक्सर उनके जनता से अच्छे संबंध हैं, कोई उनकी हुक्म उदूली करे, मिलेट्री से शिकायत करे या मांगने पर पैसे न दे तो उसकी तो शामत आयेगी ही। वहां हम हिन्दुस्तान के समर्थन में बात नहीं कर सकते, हमारा झण्डा नहीं लगा सकते। पाकिस्तान की पैरवी और पाकिस्तानी झंडे ही हर वक्त लहराते नजर आते हैं।''

''और आपका अपना धर्म?''

''हिन्दू धर्म से उन्हें कोई नफरत नहीं है। हम अपना पूजा पाठ करते हैं। तिलक लगाते व माला पहनते हैं।''

''और मंदिर जाना?''

''अब बाबूजी मंदिरों में तो सभी जगह ताले लगे है। उन्हें वैसे तो कोई नुकसान नहीं पहुंचाता पर जब अयोध्या में बाबरी मस्जिद गिराई गई थी तब सैंकड़ों मंदिर तोड़े व जलाये गये। उस समय सबमें ज्यादा ही गुस्सा था।''

''हमने तो सुना था कश्मीर में कोई हिन्दू नहीं बचा, सब भागकर दिल्ली, जम्मू चले गये।''

''हां, वह उनकी गलती थी।''

''कैसे थी गलती.... जान–माल, इज्जत का खतरा, यहां कैसे रहते? भला कोई वैसे ही क्यूं अपना घर–बार, सम्पदा छोड़ेगा?''

''सिर्फ पंडित ही भागे हैं। उनको यहां रहकर मुकाबला करना चाहिये था। सौ–दो सौ मरते भी ...पर आज लाखों मुर्दों के समान रह रहे हैं।''

''कैसे करते मुकाबला? पुलिस भी तो उनके साथ नहीं थी। किससे फरियाद करते?''

''पुलिस में मिलिटेन्ट के आदमी हैं, पर सारे ही नहीं। यहां रहते तो कुछ न कुछ होता ही। अब क्या हो सकता है? उनके मकानों पर ताले लगे हैं। जमीन, बाग–बगीचे सब मिलिटेन्टों ने कब्जे में कर लिये। मकान भी धीरे–धीरे गिर रहे हैं या ताले तोड़कर हथियाये जा रहे हैं। पांच–दस साल बाद यहां लौटेगें, तो उन्हें क्या मिलेगा? और लेने की कोशिश करेंगे तो फिर वही खून खराबा।''

मुझे उसकी बात से सहमत होने में काफी दिक्कत आ रही थी। हर आदमी को अपनी जान प्यारी है। अपनी बहन बेटियों की इज्जत प्यारी है। इसके लिये यदि वह धन–संपत्ति छोड़ देता है

तो गलत नहीं करता। मेरी असंतुष्टि जान मेरे पास ही खड़े एक तीसरे सज्जन जो हमारी बस में ही यात्रा करने वाले थे, बोले,

''यह सही कहता है। पंडितों ने कश्मीर छोड़कर बहुत बड़ी गलती की है। आतंकवादी उनके इतने खिलाफ नहीं थे जितना कि उड़ाया गया है। आम कश्मीरी पंडितों को कश्मीर में ही रखना चाहता था। आतंकवादी तो फिरौती के लिये ही डराया–धमकाया करते थे। ऐसा तो हर जगह होता है। डाकू लुटेरे आपके यहां नहीं है क्या?''

मैंने पूछा, ''तो क्या पंडितों के अलावा और हिन्दू यहां रह गये?''

''हां, खास अशांत जगह को छोड़ दें तो करीब सभी गांवों में हिन्दू परिवार मिल जायेंगे।'' इसके बाद उस श्रीनगर निवासी ने कई गांव और वहां रह रहे हिन्दू परिवारों की गिनती मुझे बताई। यह बात भी बताई कि आर्थिक, सामाजिक या राजनैतिक दृष्टि से सम्पन्न व्यक्तियों पर ही आतंकवादियों की ज्यादा गाज गिरी है और सम्पन्न व्यक्ति ही कश्मीर छोड़कर गये हैं। हिन्दुओं का गरीब, मजदूर तबका जो जाति आधारित रोजगार करता है, अभी भी गांवों में है। वे बेचारे जायें भी तो कैसे? उन्हें तो जीना भी यहीं, तो मरना भी यहीं। सम्पन्न व्यक्ति ही मौत व इज्जत से डरता है। गरीब मार खायेगा फिर भी यहीं रहेगा। उसकी यह बात काफी समझ में आने वाली थी। पंजाब में भी इतना आतंक फैला फिर भी बिहारी, बंगाली, उत्तर प्रदेश के मजदूर वहां मजदूरी करने जाते रहे। स्थानीय निवासियों को मजदूरों की जरूरत है। वे नहीं रहेंगे तो उनकी खेती–बाड़ी, घर, कारखाने, दुकानों पर काम कौन करेगा? कश्मीरी पूंजीपतियों, जमीदारों को भी सस्ते, अच्छे मजदूर चाहिये। इसलिये गरीब हिन्दुओं को क्यों भगायें?

सारी बहस के बाद मैंने उस सहयात्री से कहा कि श्रीनगर जाने की इच्छा है पता नहीं कब पूरी होगी। सहयात्री बोला

''आज ही चलिये न हमारे साथ।''

मैंने कहा ''हमें तो डर लगता है, कहीं आतंकवादी मार दें तो।''

''आप मेरे साथ चलो, आपको जम्मू वापस पहुंचाने की मेरी जिम्मेदारी है।''

''पर मैं कैसे चलूं? मुझे तो विश्वास नहीं है। वहां तो कोई पर्यटक आ जा ही नहीं रहा।''

''अब कुछ लोग आने लगे है। वैसे पर्यटक को आतंकी कुछ नहीं करते। आप लोग पूरे कश्मीर में निश्चिंत होकर घूम कर आ सकते हो।''

''और रुकेंगे कहां? खाने–पीने का क्या होगा?''

''हमारे साथ चलो तो हमारे घर खाना खिला देंगे। मजदूर की जैसी झोपड़ी है वहीं ठहरना। होटल देखो तो सब मुसलमानों के हैं। खाने के भी और ठहरने के भी। वैष्णव बनकर तो आप घूम नहीं सकते।''

''वह लाल चौक पर हिन्दू धर्मशाला थी न? पिछली बार हम वहीं ठहरे थे।''

''वह तो जला दी बाबूजी। मटियामेट कर दी। अब वहां न कोई हिन्दू नाम की ठहरने की जगह है और न ही कोई खाने का ढाबा।''

''तब तो हमारे जैसा आदमी नहीं जा सकता। कभी शांति होगी तो आयेंगे।''

''देखो ऊपर वाला ही मालिक है, जब पंजाब में शांति हो सकती है तो यहां भी हो सकती है। कश्मीर में आवाम तो सब परेशान है। पाकिस्तान में मिलने का उनका ख्वाब तो हिन्दुस्तानी मिलेट्री कभी पूरा होने नहीं देगी और इसी झगड़े में कहां तक भूखों मरेंगे?''

इस तरह हमारी राजनैतिक बातें हर जगह चलती रही। मेरे पास पेटी पर बैठकर यात्रा करने वाला नम्बर दो का एक यात्री आयकर निरीक्षक, शर्मा था। उसकी दिल्ली में पोस्टिंग है। आयकर विभाग से हमारा वास्ता पड़ता रहता है। अतः वह इंसपेक्टर मेरे लिये थोड़ा सम्माननीय हो गया था। पढ़ा–लिखा, बातूनी और मेरी रुचि का आदमी था। उसका विचार था कि भारतीय नेताओं ने कश्मीर को इस देश का भाग माना ही नहीं। यहां अलग प्रधान मंत्री सदरे रियासत व वजीरे आजम होता है। जबकि अन्य प्रदेशों में मुख्यमंत्री होता है। भारत के सारे कानून जम्मू कश्मीर को छोड़कर सारे देश पर लागू होते हैं। यह धारा 370 सारे फसादों की जड़ है। कश्मीरी आदमी सारे

हिन्दुस्तान में कहीं भी वोट दे सकता है, नौकरी कर सकता है, भूमि खरीद सकता है, पर सारे हिन्दुस्तान में कहीं का भी व्यक्ति जम्मू कश्मीर में कोई अधिकार नहीं रखता है। हम कैसे कहें कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है? लालचौक पर तिरंगा फहराने से सारी दुनिया में हलचल मचती है और हमें अमरनाथ की यात्रा कराने पर पूरा शासन–प्रशासन, सुरक्षाबल, जी–जान लगाये हैं। कश्मीर पर भारत सरकार अरबों रुपया प्रतिवर्ष फूंक रही है। सारे देश से सस्ता राशन यहां के लोगों को बांटा जा रहा है, फिर भी किसी से 'भारत माता की जय' तो बुलवा लो। जम्मू कश्मीर राज्य का एक तिहाई भाग चीन–पाक के कब्जे में है जिसे हम इस देश की नियति मान भूल बैठे हैं। कश्मीर की आत्मा तो हमारे साथ है ही नहीं, शरीर भी बंटा हुआ है और हम राग आलापते हैं, 'जम्मू कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है।'

यात्रियों की क्षुधा

हमारी बसें अपने निर्धारित स्थान से कोई साढ़े आठ बजे खिसकी। जयनाद से पूरा पहलगांव गुंजायमान हो गया। यह देरी हमें बहुत अखर रही थी। पारीक सा. प्रातः छः बजे ही चाय–नाश्ता कर आये थे। यहां हम बस में बैठे या बस के आसपास खड़े साथी–बस, 'बस अब चलने ही वाली है' इस ख्याल में दो सौ कदम की दूरी पर स्थित लंगर पर नाश्ता करने नहीं जा सके। बसें आगे बढ़ी और पुनः आधा किलोमीटर चलकर खड़ी हो गयी। पहलगांव के मुख्य बाजार के बीचों बीच कारवां खड़ा था। हमारी बस के दायीं और एक बहुत ही खूबसूरत इमारत जो मस्जिद थी, सिर उठाये खड़ी थी। मस्जिद के आगे बहुत बड़ा सुन्दर फूलों से खिलखिलाता बाग था। पारीकसा. ने यहां उतरकर अपने फोटो खिंचवाने की हसरत पूरी की। इस बाजार में दोनों ओर बड़े सुन्दर विशालकाय होटल हैं जिन पर छोटे–छोटे ताले लगे थे। होटलों के पीछे रहवासी मकान जर्जर हालत में खड़े थे। उन मकानों की खिड़कियों से चुपके–चुपके कई जोड़ी खूबसूरत आंखें लौट रहे मेहमानों को देख रही थी। संकरी गलियों में छोटे बच्चे भी उत्सुकतावश कारवां देखने आ गये थे। सुरक्षाबल सड़क के दोनों और हथियार थामे सावधान खड़े थे। सड़कें सुनसान थी और बाजार बंद। हमारे बायीं ओर एक शानदार होटल था। होटल के बाहर की दुकानें कश्मीर एम्पोरियम, पश्मीना सेन्टर, कश्मीर आर्ट्स आदि के बड़े बैनर सजाये खामोश, सुनसान खड़ी थी। होटल व दुकानों के बाहर अच्छा लॉन था। जिसके एक पौधे पर गुलाब खिल रहे थे। मेरा मन गुलाब तोड़ने को हुआ पर गुलाब के फूल पहुंच के बाहर थे। लॉन में लगी सभी फुलवारी, घास व दूब एकदम हरी व खिली हुई थी। शायद इनकी देखभाल एवं सिचांई के लिये यहां कोई चौकीदार नियुक्त है या यहां के मौसम व चार–पांच दिन पहले हुई वर्षा के कारण ऐसा है। दूब की कटिंग कोई एक माह से नहीं हुई होगी। इन सब प्राकृतिक दृश्यों तथा दरवाजों पर जमी धूल की पर्त से यह आभास होता था कि दस–पंद्रह दिन पूर्व यहां अवश्य चहलपहल थी। दुकानें लॉज खुले थे, साफ–सफाई हुई थी।

कोई आधा–पौने घंटे बाद बसों को पुनः आगे बढ़ाया गया। इससे पहले सभी टैक्सियां एवं जीपें निकाली गई थी। पहलगांव शहर से बाहर आकर पूरी बसें पुनः रोक दी गई। ज्यों–ज्यों देर होती गई हमें नाश्ता याद आता गया परन्तु यहां नाश्ते की कोई व्यवस्था नहीं थी लिहाजा अपना पैक नाश्ता निकालकर खाया। हमने पानी की बोतलें एवं केटली भर ही रखी थी। सही रूप से हमारा कारवां दस बजे रवाना हो सका। हमारे आगे मिलेट्री की जीप चल रही थी और पूरे रास्ते सुरक्षाबल प्रमुख ठिकानों पर मोर्चा जमाये बैठे थे। हमें कई जगह रेत के बोरों से बनाये बंकर जो चद्दरों से ढके थे, भी नजर आये। पूरे रास्ते हम सुरक्षाबलों का अभिवादन करते एवं नारेबाजी करते आगे बढ़े। पहलगांव से पांच–सात किलोमीटर आगे बारिश शुरू हो गई। अन्नतनाग तक हमें बारिश मिली। पहलगांव से अन्नतनाग के बीच के छोटे कस्बों में सभी जगह बाजार खुले हुये थे। सड़कों पर चहल–पहल थी। अन्नतनाग में भी पहलगांव रोड़ की दुकानें तो खुली थी परन्तु मुख्य

बाजार बंद थे। बसें सीधी खन्नाबल जाकर रुकी। अन्नतनाग कब समाप्त हुआ एवं खन्नाबल कब आया इसका हम कोई अनुमान नहीं लगा सके। संभवतः दोनों स्थानों के बीच कोई दृष्टिगत सीमा रेखा न हो। बसें सारी ही रुकी हुई थी और करीब–करीब हर बस में से यात्री उतर रहे थे। ये यात्री यहीं से कश्मीर के अन्य भागों में प्रस्थान करेंगे। खन्नाबल में बस स्टेण्ड के चौराहे पर काफी सारे फ्रूट्स के ठेले लगे थे। यहां हम दो रुपये देकर एक भुट्टा खरीदने में सफल हुये। बस स्टैण्ड से दो फर्लांग आगे पुनः बसें खड़ी हो गई। पता नहीं क्या अवरोध था? हमारी बस के बायीं ओर एक बेकरी वाले ने अलमारी सजाकर टोस्ट रखे हुये थे। यात्री भाग–भाग कर बसों से उतर टोस्ट खरीदने लगे। कोई तीन मिनट में उस मुस्लिम कश्मीरी की सभी आलमारियां खाली हो गई। दिन के साढ़े बारह बजे थे। सभी यात्री भूख–प्यास से पीड़ित थे। हमारी तरह ही अधिकांश यात्री पहलगांव में नाश्ता नहीं कर पाये थे। ढाई सौ बसों तथा इतने ही छोटे चार पहिया वाहनों का लम्बा काफिला था, रुकने में तो समय नहीं लगता था पर सरकने में अवश्य दसेक मिनट लग जाते थे। यात्रियों को जहां भी अवसर मिलता वे खाद्य सामग्री खरीदने दौड़ पड़ते ।

सेना का नियंत्रण

काजीगुंडा कस्बे से कुछ पूर्व इस रास्ते के एक मात्र डीजल पम्प पर डीजल लेने के लिये लगी बसों की भीड़ के कारण यातायात जाम हो गया था। हमारी बस डीजल पम्प से कोई आधा किलोमीटर पहले, इस जाम के कारण खड़ी हो गई। हमारे बायीं ओर खेत पसरे थे तथा दायीं ओर बगीचे के बीच एक दुमंजिला मकान था। दुमंजिले मकान के पहली मंजिल पर दो दुकानें थी। जिन पर शटर लगे थे। बीचों बीच मकान के अंदर जाने का रास्ता था जिस पर लकड़ी के दो किवाड़ लगाये गये थे। लकड़ी के किवाड़ों के आगे लोहे की पत्ती से बना मजबूत फाटक था। ज्यों ही बसों का कारवां रुका, लकड़ी के किवाड़ खोलकर उस मकान के परिवारजन हाथों में प्लास्टिक की सेवों से भरी थैलियां ऊंची कर–करके यात्रियों को दिखाने लगे। भूखे यात्री उनका इशारा समझ गये और सेव खरीदने के लिये जाने लगे। सुरक्षाबलों के जवान दस–दस कदम की दूरी पर मकान एवं बसों के बीच में स्टेनगनें लिये हुये खड़े थे। उन्होंने यात्रियों को टोका,

''कोई नीचे नहीं उतरेगा, कोई इधर नहीं जायेगा।''

लेकिन यात्रियों ने सैनिकों की कब सुनी है? मैंने भी साथियों से कहा,

''अपने भी एक थैली ले लें, कश्मीरी सेव तो चख लें।''

पारीक सा. सबसे पहले नीचे उतर चुके थे। अतः वे पांच रुपये देकर एक थैली खरीद लाये। थैली में आठ छोटे–छोटे कच्चे सेव थे। सेव देखकर मैने पारीक सा. से कीमत पूछी और सेव मुंह के अंदर रखते हुये कहा,

''कमबख्त कच्चे सेव दे रहा है। समय का फायदा उठा रहा है।''

इधर मैं सेव चगदने लगा उधर खिड़की से बाहर सेव की बिक्री की आपाधापी देखने लगा। अब वहां सेव खरीदने के लिये दस–बीस यात्री धक्का–मुक्की कर रहे थे। इसी बीच सेव बेचने वाले परिवार से एक जवान, दुबला–पतला, चश्माधारी, कोई पौने छः फुट लम्बा लड़का लोहे के फाटक की सीमा को लांघ कर बरामदे में आया। वह एक यात्री से सेवफल की थैली के पांच रुपये मांगता हुआ बाहर तक आ गया। वह कोई एक मिनट सड़क किनारे खड़ा पांच रुपये के लिये रिरियाता रहा। उधर उसके परिवार के अन्य सदस्य जिसमें संभवतः उसकी मां, छोटी बहन व छोटा भाई था सेव बेचने में मसगूल रहे। तभी एक मिलेट्री का अफसर, जिसके हाथ में वॉकीटॉकी तथा कंधे पर मशीनगन लटक रही थी, यातायात को नियमित करता हुआ उधर आया। उसने कश्मीरी को सड़क किनारे खड़ा देखा तो वह गुस्से से गालियां निकालता उस कश्मीरी लड़के पर झपटा। लड़का तुरन्त भाग मकान के अंदर दाखिल हुआ और उसने किवाड़ लगा लिये। इस एक मिनट के समय

में ही उसके परिवार वाले भी तुरन्त अपने सेव समेट मकान के अंदर भाग लिये और यात्री भी भय के मारे बसों के पास आ गये। बंद दरवाजे पर उस अफसर ने जोर से ठोकर मारी और दरवाजा खुल गया। कश्मीरी शायद उसकी कुंडी नहीं लगा पाया था। इसके बाद अफसर मकान के अंदर घुसा। मकान में से भागने एवं चीखने–चिल्लाने की आवाजें आने लगी। एक मिनट बाद ही अफसर लड़के को कालर से पकड़, घसीटता, ठोकर मारता, बाहर ले आया। अफसर गालियों की बौछार के साथ छड़ी से लड़के को पीट रहा था। वह लड़का बार–बार हाथ जोड़, कान पकड़, माफी मांग रहा था। भरपेट सबक सिखाने के बाद अफसर ने लड़के को जाने दिया। मकान का दरवाजा अच्छी तरह बंद हो गया और मकान में पूर्ण शांति हो गयी। हम यात्रियों के मुंह से लड़के के प्रति सहानुभूति के शब्द निकलने लगे। उसे इतना मारना मुझे भी बहुत बुरा लगा। वह सेव बेच रहा था, हम खरीद रहे थे, उसकी क्या गलती थी? कोई यात्री कम पैसे दे गया तो बेचने वाला मांगेगा ही। हमारी तंद्रा अभी टूटी ही थी कि वह मिलेट्री अफसर यात्रियों पर भी गरज पड़ा,

''तुम्हें खाने का इतना शौक था तो यहां क्यों आये? घर बैठते। महीनों से रात दिन एक कर रहे हैं, तुम्हारी सुरक्षा के लिये और तुम एक मिनट में सब पर पानी फेर देना चाहते हो। क्या सेव की थैली में बम नहीं हो सकता? परखच्चे उड़ जायेंगे सबके तो क्या होगा? अपना नहीं तो हमारी इज्जत का तो ख्याल करो।''

इसके बाद अफसर अपने सहकर्मियों पर बरसा,

''किसलिये खड़े हो तुम यहां? इस तरह तो कुछ भी हो सकता है।''

अफसर के ताने सुन हमें सेव कड़वे लगने लगे। जिन–जिन लोगों ने सेव खरीदे थे, अन्य यात्रियों ने उनकी ओर हिकारत से देखा। शर्म के मारे कुछ देर के लिये मैंने सेव छुपा लिये। सेव बेचने वाले दोषी थे ही, पर हम खरीदने वाले भी कम दोषी नहीं थे।

'सेव बेचने वाला क्यों दोषी था?'

एक सुरक्षाकर्मी से इस घटना के कोई पांच मिनट बाद, जब सब तरह से शांति हो गयी, यह सवाल मैंने पूछ लिया। उसने बताया,

''हमने सारे कश्मीरियों को पाबंद किया हुआ है। रोड़ के दोनों किनारे रहने वाले सभी लोग जब यात्रा की बसें गुजर रही हों तो अपने सामने के दरवाजे, खिड़कियां बंद रखें और घरों के अंदर ही रहे। यात्रियों की सुरक्षा के लिये ऐसा करना जरूरी था। हालांकि सड़क के किनारे के सब मकानों की जांच की जा चुकी है, और सभी मकानों पर हमारे सुरक्षाकर्मी तैनात हैं, फिर भी आतंकी अपनी जान की परवाह न करते हुये कोई वारदात कर सकते हैं।''

यह बात सुन हमें अपनी गलती का अहसास हुआ।

आधा घंटा गाड़ियां यहां खड़ी रही। डीजल पंप पर भी बस को कोई चालीस मिनट लगे। इस बीच यात्री बसों से उतर वातावरण का जायजा लेने लगे। वाहनों की भीड़ से भारी प्रदूषण हो रहा था। यहां एक कश्मीरी चुपके–चुपके बाल ककड़ी (खीरा) बेचने की फिराक में घूम रहा था। उसने खीरे को अपने हाथ में इस तरह लिया हुआ था, जैसे मां दूध पिलाने के लिये बच्चे को हाथ पर लिटाती है। मैंने पूछा,

''कितने का है भाई?''

उसने कहा, ''दस रुपये का।''

मुझे बड़ा महंगा लगा, मैंने नहीं खरीदा पर वह दूसरे ही क्षण बिक गया। यहां भुट्टे भी बिक रहे थे पर यात्रियों की बहुत मारामारी थी। हमारे पास खाने–पीने का अपना साधन था। अतः यहां हमने केटलियां पानी से भरी और आगे नाश्ता कर लिया। इसके बाद बसें अपनी पूरी रफ्तार से घाटी को पार करने लगी। काजीगुंडा शहर जो हमारे जाते वक्त वीरान था, आज पूरा खुला हुआ था। सड़क के दोनों ओर सूखे मेवों व कश्मीरी आर्ट्स से सजी दुकानें जगमगा रही थी। यदि बस यहां रुकती तो निश्चय ही हम खरीददारी करते परन्तु बस सब पीछे छोड़ आगे बढ़ती चली गई। जवाहर टनल से पूर्व कश्मीर घाटी का अनुपम सौन्दर्य नजर आया। जाते समय बादल छाये हुये थे, अभी इस रास्ते पर धूप खिली थी। दूर–दूर तक के गांव पहाड़ी पर बस चढ़ते समय

दिखाई दिये। जिनमें जीवन की चहल–पहल थी। बच्चे स्कूलों से आ–जा रहे थे। टनल से पूर्व एकाध जगह दस–पांच मिनट के लिये रुकना पड़ा। टनल पार करने के बाद सड़क पहाड़ी से नीचे उतरी। बनिहाल कस्बा भी आज खुला हुआ था।

साधु ऐसे–ऐसे

साधुओं से विवाद की बात भी लिख दूं। पहलगांव में बस भरने के तुरन्त बाद ही तीन–चार साधुओं की टोली बस पर आ चढ़ी थी। कंडेक्टर ने उनसे सौ रूपये मांगे तो उन्होंने साधु होने की दुहाई दी। ड्राईवर ने उन्हें लड़–झगड़कर नीचे उतार दिया। साधु कह रहे थे,

''पुलिस वालों ने उन्हें इस में भेजा है। हम आते समय भी मुफ्त आये थे। प्रत्येक बस में दो साधुओं को बिठाया गया है।''

बसवालों ने उनकी नहीं सुनी। साधु लोग बस की छत पर जा बैठे थे। खन्नाबल में बसें खाली हुई और सुरक्षाबलों ने सब साधुओं को छतों से उतार बसों के अंदर बैठने को मजबूर कर दिया। हमारी बस में भी तीन साधु आ बैठे। उन साधुओं में धुम्रपान की जबरदस्त आदत थी। पहले सिगरेट पी गई। उसके बाद चिलम लगाई। बस में बैठे सभी यात्री धुंऐ से परेशान थे पर उनसे मना करने की हिम्मत हमारे दल ने ही की। वे हमारे बिल्कुल पास बैठे थे। अतः परेशानी भी ज्यादा हमें ही हो रही थी। पहले एक शांत स्वभाव साधु ने चिलम बुझा दी। दूसरा क्रोधी साधु थोड़ी देर बाद पुनः सिगरेट पीने लगा। संजय ज्यादा ही साधु विरोधी है, उसने जोरदार शब्दों में मना किया। साधु नहीं माना और बात गाली–गलौच से बढ़कर हाथापाई तक आ पहुंची। पारीक सा. व मुझे, दूसरे यात्रियों के साथ हस्तक्षेप कर बीच–बचाव करना पड़ा। हमारी तरफ से रामू–संजय, हरिमोहन व सत्यप्रकाश थे और उधर एक अकेला साधु। दूसरा साधु शांत स्वभाव था और वह लड़ाई बार–बार टाल रहा था। लड़ाई शांत होने के कुछ देर बाद एस.पी. की सीट के पीछे की सीट पर बैठे एक राजस्थानी ब्राह्मण यात्री ने एस.पी. को संबोधित कर मीठे शब्दों में कहा,

''अब साधु लोग हैं, पी लेने दो एकाध सिगरेट। आप भी क्यों इतना जिद करते हो? अपने–अपने शौक हैं।''

उसकी यह बात सुन एस.पी. अत्यन्त गुस्सा हो उस यात्री को ही डांटने लगा।

''आप शह दे रहे हो इन्हें। बस में क्या लिखा है? पीना हो तो नीचे जाकर पीये। साधु बनते हैं, एक घंटा तो अपनी इच्छाओं का शमन नहीं कर सकते। गंजेड़ी–भंगेड़ी हैं स्साले। इनसे तो हम ही अच्छे। तुम इनका पक्ष ले रहो हो, तुम्हें शर्म आनी चाहिये।''

सत्यप्रकाश का ऐसा विकराल रूप मैंने कभी नहीं देखा था। पूरी बस में एकदम चुप्पी छा गई। राजस्थानी सहयात्री तो सकपका गया। पूरे रास्ते बस के किसी यात्री ने हमारे दल का विरोध करने का साहस नहीं किया। गुस्सैल साधु एवं संजय अलबत्ता पूरी यात्रा में एक दूसरे के ऊपर छींटाकसी करते रहे।

एक जगह शायद रामसू व रामबन के बीच में किसी गांव के निकट काफिला रुका था। वहां बसें रुकते ही साधु चिलमें भरने लगा। संजय ने बस के दरवाजे से नीचे उतर उन्हें घूर–घूर कर देखते हुये, सबको सुनाते हुये कहा,

''देखो भाई साहब! गांजा–चरस पी रहे हैं। अभी पुलिस वाले से कह दें, तो स्साले दोनों अंदर हो जायेंगे।''

गुस्सैल साधु ने चिढ़कर कहा, ''तेरा तो छोकरे! मर्डर करूंगा। तू जम्मू बसस्टेण्ड पर मेरे हाथ से जिंदा नहीं बचेगा। हमारा क्या है, यहां लंगोटी लगाये हैं, वहां जेल में भी लंगोटी लगा पड़े रहेंगे पर तेरी जिंदगी तो बरबाद कर ही दूंगा।''

संजय बोला, ''तू तो शक्ल से ही हिस्ट्रीशीटर लग रहा है। कितने मर्डर करके फरार हुआ था? बता तो। मेरा तू क्या मर्डर करेगा? शक्लदेख आईने में।''

इतने तीखे वाद–विवाद से मैं संजय को खींच ले गया और शरीफ साधु ने गुस्सैल साधु को चुप कराया। इस स्थान पर काफिला आधा घंटे ठहरा था। एक छोटी सी दुकान पर चार–पांच मिनट में सभी प्रकार की बिस्कुट आदि बिक गये। रोड़ के साथ ही मक्का का खेत छोटी सी पहाड़ी ढलान पर था। तीर्थ यात्रियों ने खेत में घुस उनकी पहुंच के सारे भुट्टे तोड़ लिये। मेरा मूड भुट्टा खाने का था, पर खेत का मालिक वहां नहीं मिला और वैसे ही तोड़ने का साहस मैं नहीं जुटा पाया। मैं मक्का का कच्चा भुट्टा मुंह से छीलकर मजे से खा लेता हूं। इस तरह भुट्टे खाने वाले कई व्यक्ति यहां नजर आये। भुट्टे तोड़ने की प्रक्रिया के दौरान ही एक कश्मीरी दढ़ियल वृद्ध कोई सत्तर साल का मुस्लिम, जो इसी बस्ती का था, आ पहुंचा। उसने भुट्टे तोड़ने को लेकर सभी यात्रियों को जबरदस्त फटकार बताई। लंगर में खाते–खाते हम लोगों की शर्म तो गायब हो ही गई थी। वरना उसको सुन, भुट्टे तोड़ने वाले चुल्लुभर पानी में डूब मरते। उस वृद्ध ने अपने बच्चों को आवाज देकर खेत के मालिक को बुलाया। जो उसके शब्दों में निहायत ही गरीब था और अब उसके बाल–बच्चे साल भर भूखों मरेंगे। भुट्टे तोड़ने वाले भुट्टे छुपाते हुये इधर–उधर हो गये। यात्रियों ने वृद्ध की बात पर कोई प्रतिक्रिया नहीं की और खेत के मालिक के आने से पूर्व ही बसें चल दी। यहां थोड़ा आगे जाकर रामू, संजय बिस्कुट एवं आमपाक (जमा हुआ) खरीद लाये जो हमने रास्ते में खाया। गुस्सैल साधु ने थोड़ी देर बाद मुझसे पूछा था,

''क्या यह दोनों तुम्हारे साथ हैं।''

मैने अपने सभी साथियों की ओर इशारा करके कहा कि हां हम सब साथ हैं। शायद हमारा इतना बड़ा दल देख साधु के हौसले पस्त हो गये और उसने मर्डर का इरादा त्याग दिया। पूरे रास्ते साधु से, इस जानकारी के बाद कोई विवाद नहीं हुआ और जब जम्मू में हम बस से उतरे तो साधु न जाने कहां नौ दो ग्यारह हो चुका था।

रामबन में भोजन

सभी गांवों कस्बों को पीछे छोड़ते अंत में हम दो बजे करीब रामबन पहुंचे। ड्राइवर ने पूर्व में ही घोषणा कर दी थी कि आधा घंटे में सब यात्री खाना खा लेना। रामबन में जिस होटल पर हमारी बस खड़ी की गई वहां एक बस और उसी समय आकर रुकी। सभी यात्री धड़ाधड़ होटल में घुस गये और खाने का आर्डर दे दिया। होटल पंजाबी हिन्दु का शुद्ध शाकाहारी था। हम भी छह सीट रोककर होटल में बैठ गये। इससे पूर्व पारीक सा. व सत्यप्रकाश ने पूरी जानकारी ली। फुर्सत होती तो हम अलग–अलग स्पेशल सब्जियां बनवाकर खाना खाते पर इस आपाधापी में हमने भी छः थालियों का ही आर्डर देना उचित समझा। थालियों में बहुत सारा चावल व दो रोटियां दी जा रही थी। हमने बिना चावल के थाली मांगी एवं चावल के स्थान पर दो–दो रोटी अतिरिक्त की बात की। पानी के गिलास तो तुरन्त आ गये पर खाना लड़ते–झपटते मुश्किल से मिल पाया। सब्जियों में एक आलू की तथा दूसरी बैंगन की थी। मैंने पहला ग्रास बैंगन का ही लिया। मैंने बैंगन न खाने का व्रत कोई पांच छः वर्ष पूर्व पेंचकी बावड़ी महादेव जी के मंदिर पर जाकर लिया था। मस्सा होने पर ऐसा व्रत लेने की मान्यता है, वह व्रत आज टूट गया। अमरनाथ बाबा का स्मरण कर आलू व

बैंगन की सब्जी के साथ प्लास्टिक की सी चीठी रोटियां किसी तरह निगली। बाद की रोटियों लेने के लिये तो हमें तंदूर के पास ही जाकर खड़ा होना पड़ा। पूरे होटल में अफरा–तफरी मची थी। यात्रियों की चिंता किसी तरह खाद्य सामग्री हासिल करने थी। किसी को सब्जी, किसी को रोटियां नहीं आ रही थी। नमक के लिये हमें भी काफी चिल्लाना पड़ा और पानी के गिलास बाद में हमें स्वयं को ही उठकर भरने पड़े। यहां होटल वाले ने एक कारस्तानी और की। प्रति थाली दस के स्थान पर पंद्रह रुपये यात्रियों से वसूल करने शुरू कर दिये। हमारी बस के किसी नौजवान यात्री को पूर्व में ही रेट का पता हो गया था अतः उसने विरोध किया। जोर–जोर से बोलने पर सब यात्रियों पर यह भेद खुल गया। जिनसे होटल वाले ने पूर्व में पंद्रह रुपये थाली ले लिये थे उन सब ने लड़–झगड़ कर बकाया वसूली। होटल वाले की सबसे बड़ी चिंता थी कि यात्री बिना पैसा दिये बाहर न चले जायें। इसी दुश्चिंता में उसने हमारे से भी चार–पांच बार पैसे मांग लिये। एस. पी. इतना बर्दाशत न कर सका। उसने वेटर व मालिक दोनों को झाड़ा। इस प्रकार यहां बहुत सस्ते मे हमारी पेट पूजा हो गई।

तीन बजे करीब हमारी बस रामबन से रवाना हुई। आगे पटनीटॉप तक चढ़ाई है। पूरे रास्ते का दृश्य बहुत अच्छा है। रास्ते में दो जगह बुलडोजर रास्ता साफ करते हुये मिले। यातायात थोड़ी बहुत देर रुका पर अखरने वाली प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। बटोत कस्बा भी आज पूरे शबाब पर था। हमें बटोत से आगे बढ़ने पर धुंध एवं बारिश मिली। जाते समय तो पता ही नहीं चल पाया था कि यह इतना बड़ा गांव है। इसके बाद आया पत्नीटॉप। इसकी खूबसूरती देख पारीक सा. ने कहा,

''दस पांच दिन यहां रुकने की इच्छा हो रही है।''

पत्नीटॉप पहुंचने पर हल्की बारिश हो रही थी। यहां रुकने एवं भोजन के अच्छे होटल हैं। धुंध, बारिश और ऊंचाई के कारण बदन ठंड से ठिठुरने लगा। यहां हमने अपने गर्म कपड़े पहने। पत्नीटॉप पार करते ही एक और विस्मयकारक सेवा नजर आई। बरसते पानी में यहां लंगर लगा था। लंगर में जनरेटर से बल्ब जलाकर उजाला किया गया था। पानी रोकने के लिये टीनशेड एवं शामियानें लगाये गये थे। गरमागरम पुड़ी, पुलाव, सब्जी व चाय यहां हर यात्री को आग्रह कर–करके दी जा रही थी। सभी बसवाले यहां अपनी बसें रोक रहे थे। हमने भी लंगर की सेवाओं का लाभ उठाया। बरसते मेह में बसों से उतर चाय पी, पुलाव लिया और एकाध पुड़ी खाई। लगातार बस से चलने में कुछ ज्यादा खाने की इच्छा नहीं हुई। यहां करीब सात बजे पहुंचे थे और साढ़े सात पर हमारी बसें यहां से आगे रवाना हुई।

वापस जम्मू

दोपहर के भोजन के बाद से मुझे लगातार नींद के झोंके आ रहे थे। जब रात हो गई तथा पहाड़ों पर रमणीक दृश्य दिखना बंद से हो गये तो नींद और गहरी हो गई। पत्नीटॉप से बसें रवाना होने की बाद की सिर्फ एक बात मेरे जेहन में है। बस से सामने की पहाड़ी पर बड़ी सुव्यवस्थित बिजली की रोशनी दिखाई पड़ रही थी। जैसे मार्ग सीधा ऊपर जा रहा हो और उसके दोनों ओर पीले चमकीले प्रकाश वाले हंडे जल रहे हो। यह घटना कुद से थोड़े ही आगे की है। रोशनी ऐसी लग रही थी मानों एक दो किलोमीटर ही दूर हो। जबकि बस से वैष्णोंदेवी का रास्ता कोई 70–80 किलोमीटर था। मैंने इस रोशनी के मार्ग को वैष्णोंदेवी का मार्ग होने पर प्रतिवाद किया पर सभी यात्रियों को भारी नींद आ रही थी बस में एक दम चुप्पी सी छाई थी इसलिये किसी ने बहस नहीं की। बस उधमपुर के आगे बढ़ी और रोशनी पुनः दिखाई दी तो मैं तुरन्त समझ गया कि यह वास्तव में वैष्णोदेवी का ही मार्ग है। पहाड़ी रास्तों की भूल भुलैया में दिशा समझना हमारे लिये निहायत मुश्किल काम था।

उधमपुर कब आया मुझे ध्यान नहीं। एक तृतीय श्रेणी के होटल के सामने बस खड़ी हुई और यात्री उतरने लगे तो मैंने चौंक कर पूछा,

''क्या जम्मू आ गया?''

किसी ने कहा ''नहीं''।

इसके बाद हमारे सब साथी नीचे उतर गये। रात के साढ़े नौ बजे थे। मुझे तो सिर्फ नींद ही अच्छी लग रही थी। हमारे साथी रामू–संजय बार–बार पूछ रहे थे,

''भाई सा. क्या खाओगे?''

मैंने कहा ''आप लोग ले लो, मैं उसी में से कुछ ले लूंगा।''

पकौड़ियाँ खाई गई। इसके बाद सबने शीतलपेय में लिम्का आदि ली। मैंने फ्रूटी का डिब्बा लिया। यहां बारिश का नामोनिशान नहीं था परन्तु होटल के बाहर कीचड़ व गंदगी थी। होटल स्वयंसेवा वाला था। पैसे दो, प्लेट अपने हाथ से उठाकर ले जाओ और टेबल पर रखकर खाओ। गिलास थे, एक टंकी में नल लगा था, अपने आप भरकर पानी पीओ। यहां और भी बसें रुकी थी अतः रौनक अच्छी थी। होटल के अलावा आसपास पूरी तरह अंधेरा था। होटल में बिजली चालू थी। इससे मैंने अनुमान लगाया कि यह जगह शहर कस्बे से दूर रोड़ के किनारे कोई स्थान है । यहां कौई पौन घंटे बसें रुकी। सभी यात्री सर्दी एवं नींद से परेशान थे। इसके बावजूद 'चाय की गर्मी' से बस चलने के बाद आधा घंटे तक हमारी बस में भजन गाये गये एवं भोले बाबा की जय बोली गई। एक व्यक्ति ने बहुत बढ़िया भजन सुनाकर सबकी सराहना लूटी। इसके बाद वही चुप्पी छा गई। सब लोग नींद में डूब गये। कोई बारह बजे जम्मू बस स्टेण्ड पर जब गाड़ी रुकी, सब यात्री जाग चुके थे एवं अपने सामानों की संभालने–बांधने का काम समाप्त कर चुके थे। उधर बस स्टेण्ड पर मिनीबस, ओटो, वीडियो कोच वाले एवं कुलियों का शोर मचा हुआ था। हमारे पास पेटी पर बैठे आयकर निरीक्षक को भी सीधी दिल्ली जाने के लिये वीडियो कोच मिल गई। हमने बस के ऊपर बंधा सामान उतारा एवं एक स्थान पर रख लिया। तब तक कई ओटो वाले हमारे पीछे लग चुके थे। एक होटल का एजेन्ट भी हमारे पीछे लग गया था। बिल्कुल पास ही होटल है। होटल नया खुला है इसलिये सस्ता है और बहुत अच्छा है। दस रूपये ऑटो वालों को देना तय कर हम सभी होटल न्यू इंडिया प्राइड (बिलो गुमट) में आ गये।

एस.पी. के साथ जाकर मैंने कमरे देखे। वास्तव में स्टेण्डर्ड के हिसाब से होटल का किराया कम था। दो कमरे लेकर सामान जमाया और सो गये।

दहशत और थकान भरी यात्रा से लौटने के बाद इतनी सुख–सुविधा वाले कमरों में सोना बड़ा अच्छा लगा। मैं प्रातः नौ बजे सोकर उठा। तब तक पारीक सा. बाजार का एक चक्कर लगा आये थे। हमारे और साथी भी आलस्य करते आराम से उठे। नहाने–धोने के अतिरिक्त भी हमारे पास कई काम थे। आज 24 अगस्त 1994 बुधवार हो चुका था। हमारी खबर हमारे घरों पर अंतिम बार 16 अगस्त मंगलवार रात्रि में प्रेषित की गई थी। हमने बाजार जाकर बारां, कोटा फोन लगाये पर बात नहीं हो सकी। हरिमोहन ने रामगंजमण्डी तथा संजय ने झालावाड़ बात कर ली। पारीक सा. भी अपनी बिटिया पूर्णिमा के घर मुजफ्फरनगर फोन से वार्ता कर चुके थे। हमें कपड़े धुलाई के लिये घोबी को देने थे। गंदे कपड़ों का अंबार लगा था। माथापच्ची करने के बाद पांच रुपये प्रति नग में धुलाई के लिये कपड़े देने पड़े। सभी ने सेविंग भी बनाई। इस होटल में पानी की बहुत कमी थी। नहाने–धोने में पानी के अभाव के कारण कई बार बाधायें आई। बिजली बंद होने से भी हमारा समय नष्ट हुआ। कमरों के बाथरूम में वाटर हीटर या गीजर लगे थे पर वे काम नहीं कर रहे थे। अतः ठंडे पानी से स्नान किया। छोटे कपड़े धोकर चौक की रेलिंग पर सुखाने हेतु डाल दिये। मेरे सारे साथी बाजार जाकर नाश्ता कर आये थे परन्तु मैं आलस्यवश होटल में ही रहा एवं नाश्ते के नाम पर हमारे पास जो कुछ था, खाकर काम चला लिया।

मां वैष्णव देवी दर्शन

हम सब साथियों ने मिलकर आज ही वैष्णोदेवी की यात्रा के लिये जाने का मानस बना लिया था। होटल में देवी यात्रा की सारी जानकारियां ले ली। होटल वाले ने सारा सामान बिना शुल्क लिये हमारे यात्रा से लौटने तक रखना स्वीकार कर लिया। इस होटल में चेक आउट टाइम दस बजे का था। अतः हमने दस बजे से पूर्व ही होटल वाले को सूचित कर दिया था कि हम कमरे खाली कर रहे हैं। वास्तव में होटल छोड़ने तक हमें साढ़े ग्यारह बज गये थे। हमने माताजी की यात्रा में अत्यल्प सामान ही लिया। जानकारी के अनुसार वहां सर्दी नहीं लगनी चाहिये अतः हमने कोई गर्म कपड़ा नहीं रखा। दो छोटे लटकाने वाले बैग लिये। इनमें चड्डी, बनियान एवं सभी के तौलिये तथा एक चद्दर, कांच, कंघा, वेसलीन, साबुन, कैमरा आदि डाल लिये। बाकी सारे सामान होटल के आंगन में चैन ताले से बांध कर रखे एवं होटल छोड़ दिया। होटल से थोड़ा आगे बढ़ने पर ही भोजनालयों की कतार थी। हमने एक होटल पर, जहां भारी भीड़ थी; भोजन के लिये अपना स्थान ग्रहण किया। भीड़ से खाना अच्छा होने की कल्पना उचित निकली पर यहां की सेवायें उतनी ही घटिया थी। पानी, नमक, मिर्च, नीबू जैसी चीजें आवाज लगाते–लगाते मिल सकी। खाना भी बहुत देर में आया। भोजन के बाद पान खाये गये। सत्यप्रकाश ने अमरनाथ यात्रा के दौरान जर्दा का डिब्बा वादियों में फेंक दिया और कभी जर्दा न खाने का प्रण ले लिया था। अब हममें कोई भी तम्बाकू या तम्बाकू मिश्रित मसाले खाने वाला नहीं रहा था।

हमारे बीच पुरजोर तरीके से आगे की यात्रा के बारे में बहस छिड़ी हुई थी। एस.पी. ने तो वैष्णवदेवी की यात्रा के तुरन्त बाद घर पहुंचने का निश्चय कर ही लिया था। हरिमोहन को रामगंजमण्डी बात करने पर पता लगा था कि उसकी नानी सास की मृत्यु हो गई है। वह भी ऊहापोह में ही था। पारीक सा. व मैं हमारे प्रोग्राम के अनुसार पठानकोट, अमृतसर, शिमला, कुल्लू, मनाली जाने के पक्ष में माहौल बना रहे थे। रामू, संजय शांत थे पर उन्हें भी आगे यात्रा करना, (संभवतः हमारे साथ) जंच नहीं रहा था। आज 24 अगस्त को खाना खाने के बाद हमारे पास समय फालतू था। हम वैष्णवदेवी रात में पहुंचना चाहते थे ताकि आराम से दर्शन कर वहीं रात गुजार लें। अतः हम सबने एस.पी. के लिये कोटा का टिकट लेने के बहाने टैम्पो में बैठ स्टेशन जाने का निश्चय किया। रिजर्वेशन काउंटर पर पहुंच, पूछताछ कर एस.पी. फार्म भरकर लाइन में लग गया। कोई एक घंटा प्रयास के बाद भी अमरनाथ जी की यात्रा से वापस लौट रहे यात्रियों की भीड़ के कारण कहीं का भी रिजर्वेशन खाली नहीं मिला। निराश वापस सभी टैम्पो में बैठ बस स्टेण्ड आ गये।

जम्मू बस स्टेण्ड पर प्रतिक्षण कटरा जाने के लिये बसें तैयार खड़ी मिलती है। यहां टिकट पर सीट नं. दिये गये और हम पांचो एक पंक्ति में बैठे। बस भरने एवं रवाना होने में कोई आधा घंटे का समय लगा। इस बीच हम टाइम पास करने के लिये वहां पर बिकने आई विभिन्न प्रकार की गोलियां व बिस्किट खरीदते रहे। उसी समय एक व्यक्ति बर्फ की ठंडी नीबू की शिकंजी के छः बड़े गिलास एक छीके में रखकर लाया। एस.पी. ने कहा,

''छः गिलास दे देना।''

मैंने कहा, ''कीमत तो पूछ लो।''

''अरे भाई सा.! होगी यही कोई आठ आने की।''

फिर भी मैंने पूछा ही,

''आठ आने की है?''

उसने स्वीकृति में गर्दन हिलाई और हम छः गिलास शिंकजी पी गये। खाली गिलासों के साथ उसे पांच का नोट दिया। वह बोला,

''अठारह रुपये दो साहब।''

मैं चौंका और उसे लताड़ा, ''लूट रहा है। अभी तूने आठ आने बताया है।''

''आठ आने में तो बाबूजी पानी भी नहीं मिलता।''

मैंने अपने साथियों की तरफ देखा। एस.पी. हंसकर बोला ,

''और दे दो जी भाई सा., खूब लंगर में खाया है। अब तो खर्चो।''

हम सभी हंस पड़े और उसे पैसे दिये। अमरनाथ यात्रा के हालत, घटनायें व कष्ट अब हमारे मजाक का विषय बन गये थे। पूरे दिन, पूरे रास्ते हम उन दिनों से संबंधित मजाक किया करते ।

बस पौने तीन बजे खिसकी। रास्ता वही था पर आज उस रास्ते के दृश्यों में 16 अगस्त वाली रमणीकता महसूस नहीं हो रही थी। दृश्य पुराने तो पड़ ही गये थे, साथ ही बारिश समाप्त हो गई थी। रास्ते भर तेज खिली धूप मिली। कई गांवो में रुकती, सवारियां लेती व उतारती बस साढ़े चार बजे कटरा बस स्टेण्ड पर रुकी। सामने ही रेल्वे रिजर्वेशन का काउंटर था तथा बगल की बिल्डिंग में माता के दर्शनार्थी यात्रियों का रजिस्ट्रेशन हो रहा था। एस. पी. रिजर्वेशन काउंटर पर चला गया और दस मिनट बाद उल्लासित होता बाहर आया कि कोटा का कंफर्म रिजर्वेशन टिकट मिल गया है। आखरी ही खाली था। माताजी की बड़ी कृपा हुई। इधर रामू रजिस्ट्रेशन काउंटर की ओर गया पर अचानक उसकी तबियत खराब हो गई। उसने चक्कर आने की शिकायत की। तब पारीक सा. रजिस्ट्रेशन हेतु गये एवं छः व्यक्तियों के ग्रुप का रजिस्ट्रेशन नं. लेकर आ गये। इस बस स्टेण्ड पर बैठने की कोई जगह नहीं थी। अतः थोड़ी बहुत देर रजिस्ट्रेशन ऑफिस की सीढ़ियों पर बैठकर आराम किया। यहां बस स्टेण्ड पर सुलभ शौचालय का उपयोग भी किया गया। हरिमोहन, एस.पी. व संजय मार्केट घूमने गये तब तक पारीक सा. मुझे लेकर एक जे.के. हैण्डीक्रॉफ्ट की दुकान में घुस गये। वहां कश्मीरियों द्वारा हाथ से बनाई हुई लकड़ी की वस्तुयें एवं विभिन्न प्रकार के गर्म व सूती कपड़े सजे थे। पारीक सा. ने उनकी बेटी के लिये एक कीमती हाथ से कढ़ाई किया हुआ कश्मीरी शॉल तथा नाती के लिये फर के बालों का बाबा सूट खरीदा। उस दुकान पर सौ रूपये से लेकर चार हजार रूपये तक के लेडीज शॉल हमने देखे। पारीक सा. की मंशा तीन–चार हजार का शॉल खरीदने की लग रही थी पर मैंने थोड़ी रोक लगाई। कीमत बढ़ने से शॉल की गरमी तो बढ़ेगी नहीं। कढ़ाई के पैसे बढ़ते जा रहे थे। पारीक सा. ने बारह सौ का शॉल एवं दो सौ का सूट खरीदकर पैक करवा कर मेरे पास स्थित बैग में रखवा दिया। हमारे सभी साथी भी घूमफिर थोड़ी देर में आ गये। उनके आते ही हम चल पड़े। रास्ते में केले खाये एवं लिम्का पी।

हमने रात में ही चढ़ाई करना एवं दर्शन करके वैष्णवदेवी में ही सोना तय किया। भुवन में बहुत धर्मशालायें है एवं जितने चाहो कंबल आसानी से उपलब्ध हैं। अधिकांश सायंकाल जाने वाले यात्री वहीं विश्राम करते है। हम पारीक सा. के नेतृत्व में वैष्णवदेवी के मार्ग पर बढ़ने लगे। पूरा कटरा कस्बा पार किया, कोई एक मील का बाजार होगा। बाजार पार करने के बाद नीचे जाने के लिये सीढ़ियां थी। यहां काफी सारी दस–बाहर वर्ष की लड़कियाँ यात्रियों से पैसे मांग रही थी। हमने रास्ते में दस रूपये की चवन्नियां ले ली थी। जो भी हाथ फैलाता एक चवन्नी हथैली पर रख कदम आगे बढ़ा देते। एक ढीठ लड़की ने रामू की शर्ट पकड़ ली। उसे एक–एक कर चार चवन्नी देने पर भी वह संतुष्ट नहीं हुई और पांच रुपये की मांग करती रही। कटरा मे कन्याओं का बड़ा मान है। इन्हें माता वैष्णवदेवी का प्रतिरूप समझा जाता है पर इस बालिका पर हम सभी को गुस्सा आ गया। डांटने से उसने रामू को नहीं छोड़ा तो मैने गुस्से से उसकी कलाई पकड़ धक्का देकर दूर कर दिया। वह रूंआसी हो चली गई। गुस्सा शांत होने पर मुझे अफसोस हुआ।

आज से कोई सात वर्ष पूर्व मैं माता के दर्शन करने बुजुर्ग व्यक्तियों के साथ आया था। उस समय कटरा में इतना बाजार नहीं था। पक्का रोड़, सीढ़ियां आदि कुछ नहीं थी। बस स्टैण्ड से आगे निकलने पर कच्चा रास्ता मिलता था। जिस पर एक दो किलोमीटर बाद बाणगंगा पर एक छोटा पुल संभवतः लकड़ी का बना था। बाकी माता के स्थान तक सारा मार्ग कच्चा पहाड़ी पगडंडी के रूप में था। अब सारा मार्ग पूर्णतः सीमेन्ट–कंकरीट व टाइल्स द्वारा सुविधा युक्त बना दिया गया है। खतरे वाली जगह–मार्ग में रेलिंग लगी है। मार्ग के दोनों ओर खूबसूरत उद्यान हैं। जिन पर नं. डाले गये हैं। एक–एक फर्लांग पर खाद्य सामग्री एवं पेय पदार्थों की दुकानें, सुविधायें (शौचालय

आदि) तथा पीने का पानी उपलब्ध है। अब यह यात्रा रोमांचक नहीं रह गई है बल्कि पिकनिक जैसा आनन्द व वातावरण पूरी यात्रा में रहता है। बाणगंगा पर स्नान के लिये महिला व पुरूषों हेतु पृथक–पृथक घाट बनाये गये हैं तथा आर.सी.सी. का पुल बना है। बाणगंगा के दोनों ओर एक बड़ा बाजार विकसित किया गया है। इस बाजार में खाद्य पदार्थ, हस्त उद्योग, फोटोग्राफी एवं पूजन सामग्री की दुकानें ज्यादा है। हमने स्नान के स्थान पर बाणगंगा के जल से शरीर पर छिड़काव कर लिया और मार्ग पर बढ़ गये। आगे घोड़ों की व्यवस्था सरकारी दर पर थी। हमने तीन घोड़े कर लिये। मेरे पैर में भारी दर्द था अतः मुझे तो बिना घोड़े यात्रा पर जाना ही नहीं था। पारीक सा. व एस.पी. पैदल भी जा सकते थे पर मैंने उन्हें घोड़े पर बैठने के लिये तैयार कर लिया। हरि, संजय व रामू ने तो पैदल का ही प्रण कर लिया था। घोड़े पर या पैदल के विवाद में भी हमारा एक घंटा खराब हो गया। इससे छः बजे यात्रा शुरू हो पाई। तीनों पैदल साथी काफी दूर तक हमारे साथ रहे। वे तीनों सीढ़ियों से चढ़ रहे थे। घोड़ों से प्रतियोगिता की भावना ने उनके पसीना ला दिया था। अर्धकुंवारी में आराम के लिये घोड़े छोड़े गये। सभी घोड़े वाले यहां आधा घंटा विश्राम करते हैं, घोड़ों को दाना डालते हैं और खुद भी यात्रियों के खर्चे से नाश्ता पानी करते हैं। हमारे पैदल साथियों के आने में पंद्रह बीस मिनट ही लगे। हमने नाश्ता आदि किया। चाय न पीने का व्रत मैने अमरनाथ के बाद पुनः ले लिया जो मुझे यहां बहुत अखरा। साढ़े आठ बजे गये थे और हम काफी ऊंचाई पर आ गये थे। मैं सर्दी के मारे कांप रहा था। सरदर्द काफी पहले ही शुरू हो गया था। ऐसे में पारीक सा. द्वारा खरीदा गया बारह सौ रुपये का लेडीज शॅाल मेरे काम आया।

पौने नौ बजे करीब पुनः आगे बढ़े। सर्वाधिक ऊंचाई पर जाकर घोड़े वालों ने बायीं ओर इशारा करके बताया कि वहां पाकिस्तानी बोर्डर है। अभी धुंध पड़ रही है अन्यथा उधर के बल्ब जलते हुये नजर आते हैं। धुंध, सर्दी और गहरी रात परन्तु कोई भय–विषाद नहीं। पूरे रास्ते मर्करी व ट्यूब लाइट की रोशनी कोंध रही है। घोड़ेवालों ने निर्धारित स्थान पर हमें उतार दिया। हमारे पद यात्रियों ने ज्यादा समय नहीं लगाया। अब हम क्लॉक रूम की ओर बढ़े। जूते, कैमरा, मौजे, कंघा, पेन, बैग आदि काफी सामान अंदर न ले जाने की हिदायत थी। क्लॉक रूम में जगह नहीं थी अतः क्लॉक रूम के बाहर एक कोने में सारे सामान रख दिये। इसके बाद पूजन सामग्री की छः थैलियां खरीदी और दर्शन हेतु पंक्ति में लग गये। यहां हमें बारां के कांताप्रसादजी अग्रवाल एवं मेरी दादी (पिताजी की मौसी छबड़ा वाली) भी दर्शन हेतु पंक्ति में लगे मिले। उनसे हमने दो मिनट चर्चा की एवं प्रथम गेट पर आकर कटरा से लिया टिकट दिखाया। रात के साढ़े ग्यारह बज गये थे और अब इतनी भीड़ नहीं थी। इसलिये किसी भी बैच के व्यक्ति की अंदर घुसाया जा रहा था। यहां कम्प्यूटराइज्ड व्यवस्था है। गेट पर मेटल डिक्टेटर लगे हैं। आतंकवादियों ने इस पवित्र गुफा को उड़ाने की धमकी दे रखी है। इसलिये यह सारी व्यवस्थायें की गई हैं। प्रथम गेट से ही एक–एक व्यक्ति की पंक्ति लगी हुई है। दोनों ओर लोहे की जाली व दीवार है ताकि कोई पंक्ति में बीच में से नहीं घुस सके। इस तरह तीन गेट हैं। तीनों पर सुरक्षा के सभी इंतजाम है। इसके बाद सीढ़ियों द्वारा मंदिर स्थित हाल में ले जाकर हमें बैठाया गया। यहां अच्छे–अच्छे कालीन बिछे थे। सामने वीडियो पर माता की फिल्म आ रही थी। आधा घंटे बाद यहां से उठ, पुनः पंक्तिबद्ध हो, सीढ़ियां चढ़ते, घुमावदार रास्तों से आगे बढ़ने लगे। पूरा मंदिर अच्छे किस्म के संगमरमर से बना है। स्नान के लिये एक जगह पाइप लगे थे पर खाली हाथ बिना कपड़ों स्नान कैसे हो? एक बरामदेनुमा जगह पर भेंट ग्रहण की जा रही थी। दर्शनार्थियों से नारेल लेकर एक कोने में फेंके जा रहे थे। नारेल के बदले हमें टोकन दिया गया। सीढ़ियॉ चढ़ते आखिर हम माता के द्वार पहुंचे। 42 मीटर लम्बी सुरंग, कोई छः फुट ऊंची पारकर आधा मिनट माता जी के दर्शन किये और उसी तरह की दूसरी सुरंग से तुरन्त बाहर धकेल दिये गये। माता जी का स्थान अवश्य प्राकृतिक है। गुफा से बाहर एक स्थान पर कूपन लेकर नारियल वापस दिये जा रहे थे। एक तरफ एक इंची मोटे पाइप में पानी बह रहा था। वहां लिखा है 'माताजी की गुफा से निकला पवित्र जल।' कई व्यक्ति वहां से साथ लाये डिब्बे–केटली आदि भर रहे थे। हम नारेल प्रसाद रूप में ले, मंदिर को निहारते निर्धारित मार्ग से बाहर आ गये।

सबसे पहले हमने अपने सामान संभाले। इसके बाद हमें रात्रि विश्राम के लिये जगह ढूँढने की चिंता हुई। चार–पांच विशाल धर्मशालायें थी। सभी यात्रियों से ठसाठस भरी। कहीं भी बैठने तक की जगह उपलब्ध नहीं। हां, कंबल अवश्य आसानी से उपलब्ध हो रहे थे। बाहर खुले में सोना संभव नहीं था। बारिश न सही ओस भी बहुत पड़ रही थी। सभी भवनों की सभी मंजिलों पर भटकने के बाद हम निराश हो, वापस कटरा के रास्ते की ओर मुड़ गये। थोड़ी देर बाद मुझे घोड़ा मिल गया और मैं सभी साथियों को पद यात्रा के लिये छोड़ घोड़े पर बैठ रवाना हो गया। रात के ढाई बजे मैं–घुड़सवार अर्धकुंवारी पहुंच चुका था। यहां भारी भीड़ थी। घोड़े वाले भी यहां आराम करते हैं। मैं एक स्थान पर बैठ अपने साथियों की राह देखने लगा पर सवा तीन तक कोई नजर नहीं आया तो मैं पुनः आगे बढ़ा। साढ़े चार बजे पूरा रास्ता समाप्त कर घोड़े वाले ने मुझे उतारा। मैने उसे पैसे दिये और रास्ते पर स्थित एक बंद होटल की बैंच पर आराम से बैठ अपने साथियों की राह देखने लगा। सर्दी और नींद से परेशान मैं फंसा हुआ सा महसूस करता वहां घंटो बैठा रहा। कोई छः बजे हरिमोहन को छोड़ चारों साथी पहुंचे। हमने एक घंटा और हरि का इंतजार किया। हरि को न आता देख आखिर हम बस स्टेण्ड रवाना हो गये।

हमारी वैष्णवदेवी की यात्रा आधी–अधूरी, परेशानी वाली तथा आपसी मतभेद की चरम परिणति बनी। रात्रि में ही गये और लौटे, प्राकृतिक दृश्यों का आंनद नहीं ले सके। सहवर्ती तीर्थ भैरूबाबा, अर्धकुंवारी के मंदिर और गर्भजून गुफा के भी दर्शन नहीं किये। अर्धकुंवारी में हरिमोहन व पारीकसा. में जबर्दस्त झड़प हुई। हरिमोहन दर्शन करने हेतु वहां रुक गया। हम पांच साथी चाय–नाश्ता कर कटरा से बस में बैठ जम्मू होटल में आ गये। होटल में आराम, स्नान, वस्त्र सुखाने के दौर में करीब बारह बजे हरिमोहन हमारे से आ मिला। वह बहुत नाराज हो रहा था। भारी नाश्ते के कारण हमें भूख नहीं लगी। सभी साथी रघुनाथ मंदिर दर्शनों के लिये रवाना हुये। दर्शनों के बाद हमारे दो साथी एक दुकान में हैण्डलूम के कपड़े देखने लगे और हम चार साथी एक हलवाई की दुकान 'अमृतसरियां दी हट्टी' पर मिठाईयां चखने की इच्छा से प्रथम मंजिल पर जा बैठे। दुकान पर हमारा डेढ़ घंटा गुजरा। हरिमोहन ने स्पष्ट कर दिया कि मैं तो सीधा बारां जाऊंगा और कहीं नहीं। रामू व संजय भी आगे यात्रा करने के पक्ष में नहीं थे। विवाद गहराता देख मैंने भी बारां लौटने का मानस बना लिया। ज्योंही हमारे दोनों साथी संजय व पारीक सा. हलवाई की दुकान पर हमसे आकर मिले, मैंने बारां लौटने का निर्णय सुना दिया। पारीक सा. उबले, मेरे निर्णय को धोखाधड़ी, वादा खिलाफी बताया। मैंने टांग के दर्द की बात कह, उन्हें शांत किया। रामू व संजय को दिल्ली न देखने का अफसोस था। इस निर्णय के बाद पारीक सा. ने उनका निजी यात्रा कार्यक्रम हमें बताया,

''मैं तो सुबह पठानकोठ जाऊंगा। वहां से कुल्लू, मनाली, धर्मशाला व मुजफ्फरनगर होता हुआ बारां पहुंचूंगा।''

पूरा निर्णय हो चुका था। हलवाई की दुकान से उतर, मैं टैम्पो में बैठ सीधा रेल्वेस्टेशन आरक्षण कार्यालय जाकर लाइन में लग गया। आरक्षण क्लर्क ने मेरे वेटिंग के टिकट लेने को बेवकूफी बताया पर मैं नहीं माना। चार टिकट ले शाम साढ़े छः बजे करीब होटल पहुंचा। साथियों को खबर दी और सब प्रातः होटल छोड़ने की तैयारी करने लगे। छः साथियों ने रात आठ बजे अंतिम बार संयुक्त खाना खाया। थके–हारे हम सब जल्दी सो गये।

अगले दिन अर्थात 26 अगस्त 1994 शुक्रवार सुबह जल्दी उठकर पारीक सा. को विदा किया। पारीक सा. नाराज से अटैची व बैग अपने हाथों में उठा जल्दी ही पैदल बस स्टेण्ड की ओर रवाना हो गये। उन्हें नीचे छोड़ने आये तो हमारी नजर होटल के कार्यालय में आये आज के अखबार पर पड़ी। मुख्य व दर्दनाक खबर के अनुसार कल सुबह नौ बजे आतंकवादियों ने उधमपुर रोड़ पर एक स्कूल बस में बम विस्फोट कर दिया। जिससे पैंतीस बच्चे मारे गये और पंद्रह घायल हुये। इस घटना के विरोध में जम्मू भाजपा द्वारा आज सम्पूर्ण बंद का आव्हान किया गया है। हम कल सुबह करीब साढ़े दस बजे घटना स्थल से गुजरे थे लेकिन हममें से किसी को भी इस कांड की जानकारी नहीं मिली थी। कल दिन भर जम्मू सामान्य रहा था और कहीं तनाव नजर नहीं

आया था। आज अखबारों में खबर आते ही तनाव हो गया। जगह–जगह लोगों के झुंड नजर आने लगे थे और पुलिस की गश्त में भारी वृद्धि हो गई। परिस्थितियों को देखते हुये हम पांचों साथियों ने भी जल्दी से जल्दी स्टेशन पहुंचने का निर्णय ले लिया। प्रातः आठ बजे हम नाश्ता करने तथा यात्रा के लिये खाद्य सामग्री खरीदने हेतु बाजार आये। पूरा गुम्मट बाजार बंद था। अतः हम पुलिस वालों की सलाह से ऑटो में बैठे रघुनाथ मंदिर के पिछवाड़े गये। वहां भरपेट आलू के परांठे खाये और वापस ऑटो से होटल पहुँचे। तुरन्त ही दूसरा ऑटो कर स्टेशन की ओर रवाना हो गये। पौने दस बजे हमने कुली के साथ प्लेटफार्म पर प्रवेश कर लिया था। सत्यप्रकाश को रिजर्वेशन में और बाकी हम चारों साथियों को सामान्य डिब्बे में बैठना था। ट्रेन में हमें आराम से जगह मिल गई। पूरी यात्रा में एस.पी. सिर्फ दिल्ली में ही हमें मिल सका क्योंकि हमारे डिब्बे काफी दूर–दूर थे। हमारी यात्रा अति सुखद रही। ऊपर की दो सीटें भी हमने रोक रखी थी और इस तरह हम मनमाफिक सोते–जागते और मस्ती करते तारीख 27/8/94 को प्रातः 4.15 पर कोटा स्टेशन पर उतरे। मेरा विचार स्लीपर क्लास वेटिंग रूम में रुक, स्नान कर, बारां प्रस्थान करने वाली साढ़े आठ बजे की ट्रेन में बैठने का था परन्तु एस.पी. आज विशेष खर्चे के मूंड में था।

''अभी हमें टैक्सी मिल जायेगी, चलो बस स्टेण्ड चलते हैं।''

हम उसके साथ कुली से सामान उठवा ऑटो स्टेण्ड आये। पांचों एक ऑटो में ठुंसकर बस स्टेण्ड पहुंचे। बहुत नाज नखरों के बाद एस.पी. की पहचान का एक ड्राइवर बारां आने को तैयार हुआ। संजय काफी कहने–सुनने के बाद भी बारां नहीं आया। उसने बस स्टेण्ड से झालावाड़ की बस पकड़ ली। ईश्वर की अनुकंपा से हम चारों सकुशल साढ़े सात बजे बारां अपने–अपने घरों पर उतर गये। सत्यप्रकाश के रूप में ईश्वर हमें जल्दी बारां क्यों लाना चाहता था? हमारे परम व पारिवारिक मित्र पुरूषोत्तम जी की मां की मृत्यु दो दिन पूर्व हो गयी थी। आज उनका तीसरा था। घर आते ही पहली खबर यही मिली और मैं तौलिया कंधे पर डाल उनके घर होता हुआ श्मशान घाट जा पहुंचा। श्मशान घाट में मैंने यात्रा के साथ–साथ, मेरे समय पर बारां पहुंचने की घटनायें, कारक बने सत्यप्रकाश का जिक्र भी सभी मित्रों से किया।

बारां से जाकर बारां वापस आने तक की अमरनाथ यात्रा कई मायनों में अविस्मरणीय है। शायद ऐसी आतंक, पाबन्दी, अभाव, धर्म से भी जुड़ी यात्रियों के राष्ट्रप्रेम की भावना से ओतप्रोत यात्रा कभी हो या न हो । हम सभी साथी इसके साक्षी बने, इसका हमें गर्व है।

।। इति ।।